वर्ष ६, अंक ११

श्रीकृष्णाय नमः

सितम्बर

भाद्रपद १९९१

वार्षिक चन्दा २)

सम्पादक—
म० कृष्णानन्द, भूमानन्द

एक प्रति ।)

विषय सूची

नं०	लेख	लेखक	पृष्ठ
१.	वेदोपदेश	...	३०५
२.	पुराण गाथा	[ले० श्रीस्वामी भोले बाबा जी ...	३०६
३.	ज्योत्यैनमः (कविता)	ले०–श्रीमती व्रजकुमारी "प्रभाकर" आश्रम ...	३१०
४.	मनुष्य के विचारने योग्य, अद्भुत ज्ञान की बात	...	३१२
५.	परमात्मा और परमात्मा का उपदेश	...	३११
६.	सब मनुष्यों के लिये परमात्मा का समान उपदेश	...	३२३
७.	भगवद्-प्रेमियों की पराकाष्ठा	[(अनुवादिका–श्रीमती व्रजकुमारी "प्रभाकर" आश्रम)	३२७
८.	सन्तों के वचन	...	३३०
९.	भजन	...	३३२

भक्ति के नियम

१. भगवान् की भक्ति का प्रचार करना, गो रक्षा और उसके लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना, वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना, सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना, राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. अग्रिम वार्षिक चन्दा सर्व साधारण से २) होगा

४. जो महानुभाव २५) या इससे अधिक देंगे वह पत्रके संरक्षक और ५) देने वाले सहायक होंगे।

५. बाहर का कोई भी व्यापारिक विज्ञापन नहीं लिया जायगा।

६. लेखोंको प्रकाशित करना, न करना, घटाना व बढ़ाना सर्वथा सम्पादक के अधिकार में होगा।

७. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नामसे और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्ति के नाम से होना चाहिए

८. जिन ग्राहकों के पास जिस मास की "भक्ति" न पहुंचे, उनको स्थानीय पोस्ट आफिस में पूछ कर उस मास की अमावस्या से पूर्व कार्यालय में सूचना भेजनी चाहिये। स्थानीय पोस्ट आफिस में बिना पड़ताल किये अथवा अमावस्या के बाद सूचना आने पर "भक्ति" नहीं भेजी जायगी।

९. पत्रोत्तर के लिये जवाबी, कार्ड भेजना चाहिए।

भक्ति के संरक्षक और सहायक

राव श्रीराम जी रईस नांगल	१२५)
भक्त नन्दकिशोर जी चर्खी दादरी	१२१)
ला० गोपालदास जी रईस लाहौर	१११)
धर्म सिंह मावजी जेठवा कोलरीप्रोप्राइटर झरिया	१२०)
आनरेबिल डा० गोकलचन्द जी नारंग वज़ीर लोकल सेल्फ गवर्नमेन्ट लाहौर	१०१)
बाई बदामो देवी पुत्री लाला गनेशीलाल चर्खीदादरी	१०१)
श्रीमती रानी निहालकौर धर्मपत्नी कप्तान राव बहादुर बलबीरसिंह जी	१०१)
राव बहादुर, कप्तान राव बलबीर सिंह जी ओ० बी० ई० रामपुरा	५१)
चौधरी शिवसहाय जी कोसली	५१)
लाला श्यामलाल जी कपूर दिल्ली	५१)
महाशय शोभाराम जी डूंगरवास	२५)
डाक्टर झवेरभाई नारायणभाई देसाई महुधा जिला कैरा	२५)
पण्डित पन्नालाल जी तोपखाना नं० ५ अम्बाला	२५)
चौधरी उमराव सिंह पहाड़ी धीरज दिल्ली	१५)
पण्डित जयराम जी 'सनातन' देहली	५)
सूबेदार मेजर दीपचन्द जी	५)
मंगलसिंह गनर नं० ५ तोपखाना अम्बाला	५)

भक्ति

वेद भगवान

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जाग्रत करने वाली सचित्र मासिक पत्रिका।

वर्ष ८ | श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी, भाद्रपद, ता० १ सितम्बर, १९३५ | अंक १०७ पूर्ण संख्या ११

वेदोपदेश

यद्वा मरुत्वः परमे सधस्थे यद्वावमे वृजने मादयासे।
अत आयाह्यध्वरं नो अच्छा त्वाया हविश्चकृमा सत्यराधः॥

मरुत्संयुक्त इन्द्र, तुम उत्कृष्ट घरमें हो हृष्ट हो अथवा सामान्य स्थान में हृष्ट हो हमारे यज्ञ में आगमन करो। सत्यधन इन्द्र! तुम्हारे लिये उत्सुक होकर हम हव्य प्रदान करते हैं।

स्वायेन्द्र सोमं सुषुमा सुदक्ष त्वाया हविश्चकृमा ब्रह्मवाहः।
अधा नियुत्वः सगणो मरुद्भिरस्मिन्यज्ञे बर्हिषि मादयस्व॥

शोभन बलसे युक्त इन्द्र! यह तुम्हारे लिये उत्सुक होकर सोमका अभिषव करते हैं तुम्हें स्तुति द्वारा पाया जाता है। हम तुम्हारे उद्देश से, हव्य प्रदान करते हैं। अश्व-युक्त इन्द्र, मरुतो के साथ दलबद्ध होकर इस यज्ञ-कुशपर बैठ कर हृष्ट बनो।

पुराण गाथा

नृसिंहावतार।

शौनक-हे ब्रह्मन्! आपके मुख से प्रहलाद का उपदेश सुन कर हम सब ऋषियों को जैसा अलौकिक आनन्द हुआ है, वैसा आनन्द पूर्व में हमें कभी नहीं हुआ। शास्त्रों से यह बात हम सुनते थे कि सनकादिक ब्रह्मज्ञानी समाधि के सुख को भी छोड़ कर भगवच्चर्चा सुनने अथवा सुनाने के लिये समस्त लोकों में विचरा करते हैं, शास्त्र की यह बात आज तक हमारी समझ में नहीं आती थी, आप की कृपा से आज यह बात हमारी समझ में आगयी कि समाधि से भी अधिक सुख हरि कथा सुनने सुनाने में है, क्योंकि समाधि का सुख तो मन, प्राण और इन्द्रियों के उपराम होने से होता है और यह सुख तो मन, आदि के उपराम बिना यानी मनादि के होते हुए ही आता है। भाव यह है कि हरिचर्चा सुनने में बिना प्रयत्न के ही मनादिक स्थिर हो जाते हैं। मनादिक का स्थिर हो जाना ही समाधि है, यह बात स्वयं भगवान् ने गीता के दूसरे अध्याय में कही है। भला! बिना प्रयास के ही प्राप्त होने वाले ब्रह्मानन्द के अद्भुत रस को कौन चतुर पुरुष नहीं चाहेगा। कोई विषयासक्त पामर पुरुष ही भले ही न चाहे, चतुर पुरुष तो अवश्य ही चाहेगा, इसलिये हे भगवन्! अब आप हम को भगवत् भक्तों में शिरोमणि प्रहलाद का आगे का वृत्तान्त सुनाइये। हम सब उसके सुनने के बहुत ही उत्सुक हैं, यह ही जी चाहता है कि सुना ही करें, मात्र दो कानों से ही न सुने किन्तु भगवच्चरित्र सुनने के लिये राजा पृथु के समान हमारे हजार कान हो जांय।

शौनक जी के ऐसे प्रेम रस युक्त वचन सुन कर देवर्षिनारद अत्यन्त प्रसन्न हो कर इस प्रकार अमृत की वर्षा करने लगे:-

नारद-हे ऋषियो! तुम धन्य हो, जिनको भगवान् और भगवत्प्रेमी भक्तों के चरित्रों को सुनने में इतनी प्रीति है। विषयासक्त पुरुषों को विषय भोगों की कथा उपन्यास आदि के सुनने में जैसी प्रीति होती है, वैसी ही प्रीति यदि भगवान् और भगवान् के भक्त विरक्त सन्त महात्माओं की कथा सुनने में हो जाय, तो कौन संसार समुद्र से पार न हो जाय! सभी हो जांय! तुम सब का मेरे ऊपर बहुत ही उपकार है कि तुम बारम्बार भवतारिणी, पाप हारिणी भगवत् की कथा में मुझे नियुक्त करते हो, दैत्य बालकों को उपदेश देने के बाद प्रहलाद का जो वृत्तान्त हुआ, उसको मैं तुम्हें सुनाता हूं, प्रेम पूर्वक ध्यान देकर सुनो।

हे शौनक! प्रहलाद के अनुशासन को सुन कर निर्मल बुद्धि वाले असुर बालकों ने उसके उपदेश को ग्रहण कर लिया और आचार्यों की

शिक्षा को स्वीकार नहीं किया, सबके सब मिलकर इस प्रकार विचार करने लगे:-

असुर बालकों का विचार=प्रहलाद सच कहता है कि यह मनुष्य शरीर बड़े पुण्य से प्राप्त होता है, इस अमूल्य नर शरीर को तुच्छ भोगों में आसक्त हो कर व्यर्थ ही बिता देना न चाहिये किन्तु इस नर शरीर को पाकर अमर भगवान की भक्ति करके अमर होने का प्रयत्न करना चाहिये, ये भोग तो हम को सूकर कूकर आदि नीच योनियों में भी मिल सके हैं, ईश्वर के तत्व को समझने की बुद्धि अन्य योनियों में नहीं मिल सकी। यदि हमको भोग ही भोगने होते, तो हमको यह मनुष्य शरीर नहीं मिलता किन्तु भोग भोगने के लिये तो कूकर शूकर आदि का जन्म ही पर्याप्त था! दयालु ईश्वर ने हमको मनुष्य शरीर दिया है, इससे सिद्ध होता है कि ईश्वर का हमारे ऊपर पूर्ण अनुग्रह है, इसलिये हमको ईश्वर का कृतज्ञ होना चाहिये, यानी जिस कार्य के लिये हमें मनुष्य शरीर मिला है, वह ही कार्य हमें इस शरीर से लेना चाहिये। यह नर शरीर ही ईश्वर के जानने का और जानकर ईश्वर भजन करने का अधिकारी है, यदि हमने इस शरीर में ईश्वर को न भजा, तो हमारी बड़ी हानि है, क्योंकि यह शरीर बड़े पुण्य से मिलता है, इस शरीर को पाकर भी हमने यदि ईश्वर की भक्ति न करके ईश्वर को नहीं प्राप्त किया, तो हम में कृतघ्नता क दोष आयेगा। दूसरे के उपकार को न मानना और उस उपकार के बदले उसका अपकार करना, इसका नाम कृतघ्नता है, कृतघ्नता के समान दूसरा पाप नहीं है, कृतघ्नता सब से बड़ा पाप है, यदि हम कृतघ्नता के कारण ईश्वर का उपकार न मान कर उसका भजन न करेंगे, तो हम अपने आत्मा ईश्वर का अपकार करने वाले होंगे, इसलिये हमें अवश्य ही कृतघ्नता दोष की प्राप्ति होगी।

जैसे ईश्वर ने हमको मनुष्य शरीर दिया है, इसी प्रकार संसार समुद्र से पार करने वाला सद्गुरु मल्लाह प्रहलाद भी भेज दिया है, बालकपने ही में भेज दिया है, यह हृदयेश भगवान ने हमारे ऊपर पूर्ण उपकार किया है, सर्व सामग्री विद्यमान होने पर भी जो मूढ अपने कल्याण के लिये प्रयत्न नहीं करता, उसे बारम्बार पछताना पड़ता है यदि हमने समस्त सामग्री पाने पर भी अपना कल्याण नहीं किया, तो हमारे समान कौन मूढ़ होगा? कोई न होगा! इसलिये हमको अपने विषयासक्त आचार्यों की शिक्षा माननी न चाहिये किन्तु अपने परम हितैषी, सच्चे सुहृद् परम मित्र प्रहलाद का उपदेश ही मानना चाहिये और अभी २ ईश्वर भजन में नियम सहित, सत्कार पूर्वक निरन्तर लगना चाहिये। 'करले सो काम, भजले सो राम' इस कहावत को न भूलना चाहिये, क्योंकि जब प्रवाह और काल किसी की बाट नहीं देखते, चलते ही रहते हैं, जैसे जल का प्रवाह जो चला गया, वह लौट कर नहीं आता, इसी प्रकार जो काल चला गया, सो चला गया, फिर लौट कर नहीं आता। अभी तो हम बालक निर्द्वन्द हैं, किसी प्रकार की चिन्ता हमको नहीं है, बड़े होने पर तो स्त्री की, पुत्र की, धन की इत्यादि अनेक चिन्तायें लग जांयगी। भला जिसको सैकड़ों बिच्छू काट रहे हों, वह सुख से कैसे सो सका है इसी प्रकार जब हमें अनेक चिन्तायें लगी होंगी, तो हम प्रसन्न मन कैसे रह सकेंगे। नहीं रह सकेंगे, प्रसन्न मन न होने से हम से ईश्वर का भजन नहीं होगा किन्तु धन का, स्त्री का, पुत्र का ही भजन होगा, जिनका भजन करने से हमको

नरक रूप संसार में ही जाना पड़ेगा। जब जवानी में भजन न हुआ, तो बुढ़ापे में तो ईश्वर भजन करने की आशा ही क्या है? तब तो खाने, पीने, चलने, फिरने को ही असमर्थ हो जांयगे, फिर भजन कैसे कर सकेंगे? नहीं कर सकेंगे! इसलिये अभी से ईश्वर भजन में लग जाना चाहिये।

नारद-हे शौनक! दैत्य बालकों ने इसप्रकार विचार कर प्रहलाद की शिक्षा मानली और गुरु पुत्रों की सीख का आदर नहीं किया। तबबालकों की एक मति देख कर गुरु पुत्र घबरा गये और उन्होंने दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपु के पास जाकर सब वृत्तान्त कहदिया है दैत्यराज उनके अप्रिय वचन सुनकर क्रोधमें भरगया, कोपसे शरीर कांपने लगा, आखेंलाल हो गयीं, पुत्र, के मारने का विचार करके प्रथम उसने शान्त, दान्त, विनय से नम्र, हाथ जोड़े खड़े हुए प्रहलाद को टेढ़ी दृष्टि से देखा और पीछे इस प्रकार कठोर वचन कहना आरंभ किया:-

हिरण्य-कशिपु=हे दुर्विनीत, मन्दात्मन, अधम, कुल भेदक स्तब्ध! तू ने मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया है, मैं तुझ आज्ञा न मानने वाले को आज यम के धाम में पहुंचाऊंगा। जीता नहीं छोड़ूंगा! जब मैं क्रोध करता हूं, तो लोकपालों सहित तीनों लोक कांप उठते हैं, जिसके क्रोध से तीनों लोक कांपते हैं, उसके शासन को हे मूढ! तू किसके बल से त्यागता है? मेरे समान कोई भी तीनों लोकों में बली नहीं है, तब तू किसके बल से मेरी आज्ञा को नहीं सुनता?

प्रहलाद-हे राजन्! जिसकी आज्ञा से सूर्य तपता है, वायु वहन करता है, इन्द्र, वरुण और मृत्यु जिसके भय से दौड़ते हैं, जो मेरा, तुम्हारा और सब बलवानों का भी बल है, ब्रह्मादिक देवता जिसकी आज्ञा का पालन करते हैं, जो सब का ईश्वर सब को नियम में रखने वाला है, जो काल का भी काल है, जिसका बल पाकर इन्द्रियां, मन, बुद्धि, आदि सब काम करते हैं, उसी जगदीश्वर, मायापति, मायातीत परब्रह्म का मुझे बल है। आपको भी उसीका बल है। हे पिता! यदि आप कहें कि वह तो मेरा शत्रु है, तब वह मेरा बल कैसे होगा। तो आप अपना असुरभाव त्याग दीजिये, फिर आप का कोई शत्रु ही नहीं रहेगा, सब मित्र हो जांयगे, क्योंकि न जीता हुआ मन ही शत्रु है, वश में न किये हुए मन के सिवाय अन्य कोई शत्रु नहीं है, अपने मन को आप सम कर लीजिये, मन के सम होते ही कहीं भी, कोई भी, कभी भी आप का शत्रु नहीं रहेगा, मन का सम करना ही अनन्त भगवान् का पूजन है। यदि आप कहें कि मैंने दिग्विजय में अपने सब शत्रुओं को जीत लिया है, इसलिये अब मेरा कोई शत्रु है ही नहीं, तो यह आप का कथन सत्य है, परन्तु कोई २ मन्द बुद्धि वाले सर्वस्व को हरण करने वाले एक मन और छः इन्द्रियों को तो नहीं जीतते, किन्तु दशों दिशाओं को जीता हुआ मानते हैं, परन्तु शत्रु और मित्र अज्ञान के रूपे हुए हैं, जो कोई मन और इन्द्रिय रूप शत्रुओं को जीत लेता है, उसका कोई शत्रु रहता ही नहीं किन्तु उसके सब मित्र हो जाते हैं, किसी को शत्रु मित्र समझना, यह ही अज्ञान है, अज्ञान के कारण से ही शत्रु 'मित्र की कल्पना है, जहां अज्ञान दूर हुआ, तहां न कोई शत्रु है, न कोई मित्र है, एक सम ईश्वर ही सर्वत्र विराजमान है, जो सम ईश्वर को सर्वत्र देखता है, इसके लिये न कोई शत्रु है, न कोई मित्र है किन्तु सर्वत्र एक सम ईश्वर ही है।

हिरण्यकशिपु-अरे ! तू कहीं मरने को तो नहीं हुआ है, जब चींटी मरने को होती है, तब उसके पर निकल आते हैं, तू भी मरने को हुआ है, तभी तो ऊंटपटांग बोलता है ! अरे मन्दात्मन् ! मन्दभाग्य ! मेरे सिवाय क्या और कोई भी जगत् का ईश्वर है ? मेरे सिवाय कोई अन्य ईश्वर नहीं है ! मैं ही एक ईश्वर हूं, तू कहता है कि सर्वत्र ईश्वर है, यदि ईश्वर सर्वत्र है, तो इस खम्भे में क्यों नहीं दीखता ? यदि होता, तो अवश्य दीखता ! है ही, नहीं, इसी लिये नहीं दीखता ! तू झूठा है, तुझ झूंठ बोलने वाले का शिर मैं धड़ से अलग करे देता हूं, यदि तेरा ईश्वर है, तो आकर तेरी रक्षा करे।

नारद-हे शौनक ! इस प्रकार महा असुर अनेक पूकार के दुर्वचनों से महा भागवत् पुत्र को बारम्बार पीडित करके खड्ग हाथ में लेकर अपने राज्यासन पर से कूद कर खम्भे को मुट्ठी से ताडन करने लगा और हिलाने लगा। प्रहलाद हाथ जोड़े हुए सामने खड़ा हुआ देखता रहा, खंग को देख कर भी भय को प्राप्त नहीं हुआ। क्योंकि जो परम भागवत सर्वदा अपने इष्टदेव हृषीकेश को देखते हैं, वे मृत्यु से भी नहीं डरते, मृत्यु को भी अपना आत्मा जानते हैं, इसलिये किसी से उनको भय नहीं होता। हिरण्यकशिपु खम्भे को ताड़ रहा था, प्रहलाद चुप चाप खड़ा हुआ देख रहा था, इतने में ही खम्भे में से एक महा भयंकर नाद हुआ, जिससे अण्डकटाह फट गया और अण्ड-कटाह को फोड़ कर वह नाद ब्रह्मलोक में जा पहुंचा, उसको सुन कर ब्रह्मादिक ऐसा मानते हुए कि प्रलय होने वाला है, हिरण्यकशिपु, जो बल से पुत्र को मारने का प्रयत्न कर रहा था, उस अद्भुत ध्वनि को सुन कर चौंक पड़ा, सभा के भीतर देखने लगा, परन्तु उस भयानक शब्द का करने वाला कोई उस सभा में दिखायी नहीं दिया, जिस भयंकर शब्द से सभा में बैठे हुए सब दैत्य डर गये थे। उसी समय भगवान् अपने भक्तों का भाषण सत्य करने के लिये और सब भूतों में अपनी व्याप्ति यानी व्यापकता दिखलाने के लिये अद्भुत रूप धारण करके खम्भे में से निकल आये, कभी नर रूप से दिखायी देते थे, कभी सिंह रूप से दिखायी पड़ते थे, वस्तुतः तो न नर थे, न सिंह थे, किन्तु अपूर्व रूप वाले थे !

शौनक-हे देवर्षे ! कौन से भक्तों का क्या २ भाषण सत्य करने के लिये भगवान् ने ऐसा अद्भुत रूप धारण किया था, कृपया हमको समझाइये !

नारद-हे शौनक ! प्रथम तो प्रहलाद का कथन था कि भगवान् भौतिक भावों में, भूतों में और सब में है इस प्रल्हाद के बचन को सत्य करने के लिये खम्भे में से ऐसा रूप धारण किया, दूसरे सनकादिक ने शाप देते समय कहा था कि तीनों जन्मों में शाप से उद्धार होगा, अपने भक्त सनका-दिकों के इस बचन के सत्य करने को भगवान् ने ऐसा अद्भुत स्वरूप धारण किया, तीसरे हिरण्य-कशिपु ने ब्रह्मा जी से बरदान मांगा था कि तुम्हारे रचे हुए प्राणियों से मेरा मृत्यु न हो, न बाहर, न भीतर, न नरों से, न मृगों से, मेरा मरण हो, ब्रह्मा जी ने भी ऐसा ही उसे बरदान दिया था, इसलिये अपने भृत्य ब्रह्मा और हिरण्यकशिपु का बचन सत्य करने को भगवान् ने ऐसा अनोरोग स्वरूप धारण किया कि जो रूप ब्रह्मा का उत्पन्न किया हुआ न था, न नर था, न मृग था, न सभा-गृह के भीतर था, न आंगन के समान बाहर था ! भगवान् के भृत्य मैं (नारद) ने भी इन्द्र से कहा

था कि यह महाभागवत तेरे (इन्द्र के) हाथ से न मरेगा, क्योंकि यह अनन्त भगवान् का अनुचर है, भगवान्ने गीतामें कहा है कि कौन्तेय ! मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मेरा भक्त नष्ट नहीं होता, और भी भगवान का वचन है कि मैं अपने भक्तों का संसार समुद्र से उद्धार करता हूं, इस अपने वचन को भी सत्य करने के लिये भगवान् खम्बे में से निकले। भगवद्भक्त का नाश नहीं होता सच कहा है:-

पाठक ! आगे नारद नृसिंह स्वरूप का वर्णन करेंगे, उसको आगे के लेख में दिखावेंगे।

कुं०—भगवत अपने भक्त करते हैं उद्धार,
नाश न होता भक्त का होता बेड़ा पार।
होता बेड़ा पार, भक्त का भवसागर से,
पाता पद निर्वाण, मिले नट नागर से।
भोला ! भजते ईश, देर किंचित् भी करमत,
करते हैं उद्धार, भक्तअपने का भगवत्॥

ॐ ज्योत्यैनमः ॐ

(अनुवादिका-श्रीमती ब्रजकुमारी "प्रभाकर" आश्रम)

हे ज्योति जीवन ज्योति रूप हे विश्व के नायक प्रभू।
हे सर्व शक्ति शाली पावन पतित जग मायक विभू॥ १॥
हे दीन बन्धु दीनानाथ दीन उद्धारक दयाल।
हे भक्त वत्सल नित्य शुद्ध विशुद्ध मुक्त स्वभाव कृपाल॥ २॥
हे विश्वस्थित ज्योतिर्मयी जग ज्योति हे विश्वात्मा।
हम तुम्हारी वन्दना करें तुमही हो परमात्मा॥ ३॥
सब सृष्टि रचना को कभी हम भूल कर न बुरा कहें।
मन से विनीत हो एकता की स्थापना को हम लहें॥ ४॥
हिन्दु मुस्लिम क्रिश्चियन औ बुद्ध सिख सब एक हों।
एकता लेकर कहें अब हे प्रभू ! हम नेक हों॥ ५॥
मिलकर करें सब प्रार्थना सुख शान्ती के साम्राज्य की।
दुखिया अकिंचन दीन जन समता लहें राम राज्य की॥ ६॥
धर्म उन्हों पर हो कृपा उनका कभी न अनिष्ट हो।
छोटे बड़े निर्धन धनी तुझसे सभी सम दृष्ट हो॥ ७॥
भाई बहनों का परस्पर द्वेष भाव विनाश हो।
मित्र की दृष्टि से देखें प्यार की उर पाश हो॥ ७॥
मैं और हूं वह और है यह भेद भाव विनष्ट हो।
इक पिता के पुत्र सम हम भाई भाई इष्ट हो॥ ९॥

मानसी शारीरी आत्मिक शक्ति हमको दीजिये।
प्रिय मधुरता सत्यता युत श्रेय वाणी कीजिये ॥ १० ॥
सर्व सेवी सब प्रति हो सबके उरमें प्यार हो।
उन्नतिप्रद सबमें अब औदार्य का संचार हो ॥ ११ ॥
सत्पथ पथी होते हुये हम तेरे दृढ़ विश्वस्त हों।
आत्मा प्रबोधित बुद्ध हों सब अन्त में त्वयि व्यस्त हों ॥ १२ ॥
आपकी मरजी में मरजी ही हमारी अरजी हो।
पूर्ण हो मरजी तुम्हारी अन्यथा सब फरजी हो ॥ १३ ॥
नैन मन हों खुल रहे और आपका अधिकार हो।
हम तुम्हारे ही लिये तुम पूर्ण प्रेमागार हो ॥ १४ ॥
अपनी परम परिपक्व मति प्रीति प्रतिति दीजिये।
जीवन के जीवन ज्योति हो तुम ज्योति दृष्टि कीजिये ॥ १५ ॥
राम कृष्ण अर्हन्त बुद्ध ईसा मुहम्मद और कबीर।
होगये आदर्श जो यह हैं तुम्हारी ही तस्वीर ॥ १६ ॥
मीरां नानक आदि ने पर हेतु जो सत्कर्म किया।
हम भी आज्ञा का तथावत् चाहें पालन है किया ॥ १७ ॥
भक्त में तव रूप को और भक्त को तव रूप में।
एक कर देखें सदा हम तेरे रूप अनूप में ॥ १८ ॥
मुक्त होवे द्वन्द से हम कौनसे सदुपाय से।
दूर करके सब त्रुटि तव प्रार्थना के उपाय से ॥ १९ ॥
संगठन हो एकता से सबका अब कल्याण हो।
मिलकर करें गुण गान तेरा ज्योति जीवन प्राण हो ॥ २० ॥
जल बुद्बुदा लहरें यथा सागर ही से उद्भूत है।
भिन्न हैं नहीं यद्यपि यह रूप उसका प्रभूत है ॥ २१ ॥
भिन्न हैं तुमसे नहीं हम भिन्न तुम हमसे नहीं।
रूप है कल्लोल वत् बहु पर है आत्मा इक वही ॥ २२ ॥
सब विश्व में आनन्द हो आनन्द हो आनन्द हो।
हों सुधा वर्षा धरा पर दुग्ध फल बहु कन्द हों ॥ २३ ॥
रत रहें पर उपकृति में तुमको भूलें न धनी।
मुख से बोलें भक्त जन जै ॐ ॐ ज्योति ध्वनी ॥ २४ ॥
रक्त का कण २ करे तव वन्दना यह हजार हो।
रोम अगिणत से हमारे धन्यवाद अपार हों ॥ २५ ॥
फिर प्रेम से बोलो निरन्तर जै निराकार ज्योति जय।
आपके आशीश से हों जन्म मृत्यु से अभय ॥ २६ ॥
शान्ती समृद्धि की ज्योति ॐ ॐ निरामयी।
प्रेमकी ज्योति सुनहरी बरसे सब पर दयामयी ॥ २७ ॥
जय हो २ ज्योति जय हो ॐ ॐ अखंड की।
परम पूर्ण प्रेम मय हो (एक हों सब) आत्मा ब्रह्मांड की ॥ २८ ॥

मनुष्य के विचारने योग्य

अद्भुत ज्ञान की बात

गतांक से आगे

बात को भूल जाना, अरुन्धती और ध्रुव का न दीखना, कान मूंद करके जो अनहद बाजे भीतर वैश्वानर अग्नि से बाजते हैं उसके मन्द हो जाने से सुनाई नहीं देते, दीपक में गन्ध नहीं आती, आंख से नाक की फुलक नहीं दीखती, स्वप्न के द्वारा मालूम होना इत्यादि। जब मनुष्य मरता है तो मुमुर्षु की पहले आंखें निठरती हैं, नाभि तक न पहुंच कर श्वास ऊपर ऊपर से आने लगता है और जैसे तृस्मज्जलायुका जोरव अपने दो पैरों को आगे जमा कर पिछले पैरों को उठा लेती है, और जैसे मनुष्य चलता हुवा एक पैर को आगे जमा कर पीछे दूसरे पैर को उठाता है इसी प्रकार से जीवात्मा अविद्या से चलाया हुवा सूक्ष्म शरीर पर अपनी शक्ति और स्वत्व जमा कर स्थूल शरीर से अपनी शक्ति को खैंच लेता है और उसके हाथ पैर ठण्डे हो जाते हैं। हृदय के पास उष्णता आ जाती है तब हृदय का अग्रभाग खुल जाता है और यह आत्मा इस शरीर से निकलता है आंख द्वारा, कान द्वारा, मूर्द्धा, दशवां द्वार जैसी उसकी उपासना या ख्याल होता है उसके द्वारा निकल कर वायु को प्राप्त होता है। जैसे यहां पृथिवी का स्थूल शरीर भूलोक में रहता है ऐसे वहां भूवर्लोक में वायु का सूक्ष्म शरीर रहता है। उस सूक्ष्म शरीर की आयु स्थूल शरीर से दुगनी होती है। मरते समय जो उन्नति का देवता रहता है वह उसकी उन्नति कर देता है। वह मर करके ब्रह्मा, विष्णु, महादेव या कोई बड़ा देवता बन जाता है। गन्धर्व, पितर, किन्नर वा और कोई भूत प्रेत का शरीर धारण कर लेता है।

मनुष्य को आठ प्रकार की सिद्धियें होती हैं वह देवताओं या भूतों की उपासना से होती है। और उनको (देवताओं या भूतों को) स्वतः सिद्ध होती हैं मुमुर्षु के निकट आये हुये सम्बन्धियों को चाहिये कि किसी तरह का कोलाहल, शब्द, रोना, धोना आदि न करें। गीता का उपदेश सुनावें कि तू अब परमात्मा के दर्शन करेगा, परमेश्वर को प्राप्त होगा, भगवान के नाम लेने से तेरे सब पाप नष्ट हो गये अब तू अन्त समय उसी का ध्यान लगा, ओं का स्मरण कर। "अन्त मति सा गति" अन्त में परमेश्वर का स्मरण कर तू इरादों और संकल्पों का बना हुवा है, जैसा संकल्प करेगा वैसा स्वयं हो जावेगा, तू स्वयं परमात्मा है। तेरे ही संकल्प से व्याय आदि बीमारियों में, योग से चित्त भंग होने में, स्वप्न में, मरते समय, अपने खयाल से या सुनने के संस्कार से स्वयं तू वैसा ही बन जाता है। तेरे सिवाय कुछ नहीं। अपने आत्मा को परमात्मा रूप से चिन्तन कर जब रज्जु को सर्प रूप से चिन्तन किया जाता है तो भय कम्पादिक होते हैं। और जब रज्जु रूप से ज्ञान होता है तब भय कम्पादिक निवृत्त हो जाते हैं। जब आत्मा के अज्ञान से नाम रूपात्मक जगत्, जन्म, मरण, लोक परलोक भासने लगते हैं और जब अधिष्ठान रूप आत्मा

का ज्ञान होता है तब सब निवृत्त हो जाते हैं। पास बैठने वाले सब मनुष्यों को परमात्मा का चिन्तन करना चाहिये और धीरे धीरे ओं का जाप। क्योंकि उस समय स्थूल शरीर से सूक्ष्म शरीर के सब परमाणु निकल कर दूसरे शरीर का संगठन करते हैं। उस समय शान्त वातावरण होना चाहिये। सब लोग शान्ति से परमेश्वर से प्रार्थना करें कि इसकी सद्गति हो, इसके कर्म इसका पीछा न करें सब नष्ट हो जांय। मनुष्य को जो अपने लिये चाहता है वह दूसरे के लिये करना चाहिये। इसी मार्ग से चलना और चलाना चाहिये। रोम रोम से परमात्मा का नाम जपना और चिन्तन करना, पिण्ड को ब्रह्माण्ड के साथ मिला कर परमाणु परमाणु से ओं ओं कहना। सारा जीवन और इसमें जो कुछ कर्म है सब परमात्मा को समर्पण कर देना चाहिये। प्यारी से प्यारी वस्तु परमात्मा के नाम पर दान कर देनी चाहिये जैसे मोरध्वज ने अपना पुत्र, बहुतेरे राजा ग्रहण के समय में अपनी रानियों को और जगदेव ने अपने शिर को, राजा शिवि ने अपने मांस को, राजा दधीचि ने अपनी हड्डियों को और राजा बलि ने अपने सर्वस्व को परमात्मा के नाम पर दान कर दिया था तुम भी वैसा ही करोगे तो संसार से पार हो जाओगे। क्योंकि मनुष्य अब उन्नति करते करते परमेश्वर को ही प्राप्त होगा वह मर करके कीड़ा मकोड़ा तो होने का नहीं। जहां कहीं ऐसा कहा गया है वह केवल वैराग्य के लिये है। तुम श्मशान को जाओगे तो वहां महादेव रहते हैं तुम्हारी भस्म को अपने शरीर से लपेटेंगे, तुम्हारी हड्डियों की माला पहिनेंगे तब तुम्हारा आत्मा परमात्मा में लय हो जायगा, फिर जन्म मरण कहां ? तुम जलों में प्रवाह करे जाओगे तो वहां विष्णु भगवान् रहते हैं उनको प्राप्त होगे। प्यासा पुरुष भी जल की अभिलाषा केवल इसी-लिये करता है कि उसमें परमात्मा निवास करते हैं। जंगल में यदि तुम्हारा शरीर डाला जायगा तो वहां नरसिंह भगवान् का निवास है और दत्ता त्रेय जी हैं वह तुमको प्रहलाद की भान्ति प्यार से चाटेंगे और केवल स्वरूप का ज्ञान दत्तात्रेय जी देंगे। ऐसा निश्चय रखने से तुम्हारे दोनों हाथों में लड्डू हैं।

"सर्वोऽहमस्मीति उपासीत तद्व्रतम्"

अब रह गई यह बात कि-"पुण्येन पुण्यं लोकं नयति, पापेन पापं उभयम्यां मनुष्य लोकम्"। कहते हैं कि जब मनुष्य के पाप कर्म अधिक होते हैं और पुण्य कर्म न्यून तो पश्वादि योनि को जीव प्राप्त होता है और पाप न्यून और पुण्य अधिक होने से देव योनियों को पाता है। और पाप पुण्य दोनों बराबर होनेपर मनुष्य योनि को प्राप्त होता है परन्तु वास्तव में यह नहीं है। जीव आता है जाता है, घटि यन्त्र की तरह और तेली के बैल की भान्ति चक्कर लगाता हुवा मनुष्य शरीर को परमात्मा की दया से प्राप्त करता है यह कर्म योनि है और शेष सब भोग योनि हैं। यदि मनुष्य योनि में जीवात्मा शुभाशुभ कर्म करके देवतादिक और पश्वादिक भोग योनियों को प्राप्त करे तो वह मनुष्य योनि से कम होनी चाहियें। पर ऐसा नहीं है, एक ग्राम की चींटी और मच्छरों की यदि संख्या करें तो सारी पृथिवी के मनुष्य भी उनके बराबर नहीं हो सकेंगे। प्रश्न-तो हम कैसे माने ?

उत्तर-इस सृष्टि से पहले परमात्मा ही था और अन्त में वही रहेगा। वर्तमान में जो दीखता है वह भी वही है।

"आदावन्ते यन्नास्ति" जो जगत आदि

अन्त में नहीं है वह वर्तमान में भी असत्य है। सत्य केवल परमात्मा है, वही राम है।

"राम नाम सत्य है सत्य बोलो गत्य है"

यह जो मुरदे के पीछे जाते हुये कहा करते हो वह जीते जी कहो और समझो।

'सदेव सोम्येदमग्रासीदेकमेवाद्वितीयम्'

हे सौम्य! सृष्टि से पूर्व एक परमात्मा ही अद्वितीय सत् था। उसने क्यों और किसके लिये सृष्टि उत्पन्न की यह नहीं जानते। परन्तु सृष्टि की उत्पत्ति होना एक गिरावट है। परमात्मा से प्रकृति उत्पन्न हुई, प्रकृति से महत्तत्व, महत्तत्व से अहंकार, अहंकार से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जलों से पृथिवी, पृथिवी से बीज, और उनसे ओषधी वनस्पति यहां तक गिरावट हुई। यहां से फिर उन्नति आरम्भ हो कर अन्त में परमात्मा में लय होने के लिये उन्नति आरम्भ हुई। पहले वृक्षों के शिर, और गर्भ में बच्चों का शिर नीचे को होता है और पैर ऊपर को होते हैं और एकेन्द्रिय ज्ञान होता है। वृक्षों से पशुओं की योनि उन्नत होती है उनका शिर सीधा आगे को होता है। और तिर्यग् व सर्पादि से गौ अश्वादि की सृष्टि उन्नत है। गौ, सर्प, मच्छी, बन्दर, शूकर, हाथी, इत्यादि योनियों से जीव उन्नति करता हुआ मनुष्य शरीर को प्राप्त हुवा। और उन मनुष्यों में विशेषतः ऐसे स्वभाव प्रकृति आई है। बहुतेरे मनुष्य काले सांप और भेड़िये की भान्ति क्रोधी होते हैं। वह अपने उपकार करने वाले का प्राण लेने से भी चूक नहीं होते। बहुतेरे गौ जैसे शान्त स्वभाव वाले होते हैं। मनुष्य शरीर जब इन योनियों से बने तब गणेश जैसे और और देवताओं की आकृति वाले बन्दर, मच्छी और वासुकी नाग इनकी थोड़ी प्रकृति इनमें मिलती थी और मनुष्य की प्रकृति इनमें अधिक थी। अब बनते बनते मनुष्य ठीक बन गया है, सीधा खड़ा हो गया है, अब इसका तीसरा नेत्र खुलेगा और यह इससे ऊपर को देखेगा और सूक्ष्म अवस्था में चला जायगा। भूलोक से भुवर्लोक को, भुवर्लोक से स्वर्गलोक को, स्वर्गलोक से महर्लोक को, उससे जन लोक को, उससे तपलोक को और तपलोक से सत्यलोक को प्राप्त हो जावेगा। सत्यलोक से ब्रह्मा, ब्रह्मा से विष्णु, विष्णु से महादेव और महादेव से निराकार ज्योति स्वरूप परमात्मा को प्राप्त हो जायगा। यह उन्नति की हद है।

"सा काष्ठा सा परागतिः"।

अब परमात्मा को प्राप्त होने के लिये यत्न करना चाहिये, सत्य मार्ग पर दृष्टि रहनी चाहिये, जीवन के रुख को ईश्वर की तरफ झुकाना चाहिये परमेश्वर के नाम जपने वाले, कीर्तन करने वाले, उसकी महिमा को जानने वाले, सत् मार्ग को बतलाने वाले, भ्रम ज्ञान को हटाने वाले, जिनकी वाणी के द्वारा अज्ञान ऐसे मिट जाता है जैसे सूर्य की किरणों के द्वारा अन्धकार। ऐसे साधु, महात्मा और भले पुरुष इनका संग जो सत्संग कहलाता है करो। सत् परमेश्वर है उसका संग 'अहंब्रह्मास्मि' 'तत्त्व मसि' वाक्यों के अनुसार जैसे तुम देह, प्राण, इन्द्रियें, मन, बुद्धि को अपना आपा खयाल करते रहे हो, मानते रहे हो वैसे ही अजर, अमर, निरंजन, निराकार, ज्योतिस्वरूप परमात्मा को अपना आपा मानो, खयाल करो। ऐसा जो ब्रह्मात्मा का एकत्व रूप ज्ञान है उस ज्ञान के उदय होने में जिस कर्म के द्वारा सहायता मिले वही कर्म अच्छा है। फूल वह अच्छा है जो ठाकुर जी

पर चढ़ाया गया है उस फूल की अपेक्षा जो बिखर कर धूल में मिल गया है। कर्म वही अच्छा है जो परमात्मा के लिये हो। वही पुत्र, धन, कलत्र, इष्ट मित्र, जो भगवान् की भक्ति के लिये हों। वही जीवन अच्छा है जिसमें भगवान् के गुण, कीर्तन, नामों द्वारा किये जांय, सत्संग हो, ज्ञान हो। आत्मा अजर अमर और निष्पाप, निरंजन, निर्विकार, ज्योति स्वरूप हो जाय। परमात्मा को अनन्तवार हमारी नमस्कार हो और धन्यवाद हो।

'ओं अदाम ओं पिबामः'

'ओं कारेवेदं सर्वम्' 'आत्मैवेदं सर्वं' 'ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्तात् ब्रह्म पश्चात् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण अधश्चोर्ध्वं प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्॥

अहा हा! सब कुछ यह परमात्मा ही है। आगे, पीछे, दायें, बांयें, ऊपर, नीचे आकाश की तरह परमात्मा ही छपा हुवा है।

कर्म सत्यानृते चोभे त्वमेवास्ति नास्ति च।

बुरे भले कर्म भ्रम के सिवाय कुछ नहीं। सत्य, असत्य, द्वैत, अद्वैत, अन्धकार, धूप, शुभाशुभ सापेक्षिक शब्द हैं। मनुष्यों के कर्म एक मत की अपेक्षा से दूसरे मत के कर्म शुभाशुभ कहलाते हैं। जैसे वैष्णवों का स्नान करना, तिलक लगाना स्वर्ग को लेजाता है वैसे ही जैनियों का न्हाना, मुंह धोना, तिलक लगाना विपरीत है।

"मुंह धोवे रोजी खोवे न्हाय नरक को जाय"

स्मृतियों में लिखा है:-

एकाहमपि कर्तव्यं भूमिष्टमुदकं शुभम्।
कुलानि तारयेत् सप्त यत्र गो वितृषिर्भवेत्

तालाब, पोखर बनाने का खोदने का इतना माहात्म्य है कि इतना गड्ढा भी भूमि में खोद देना कि व जिसमें इतना पानी भर जाय जितने में एक गाय की प्यास बुझ जाय उसका इतना पुण्य होता है कि अपने सात कुलों को संसार से तिराकर स्वर्ग को ले जाता है। जैनियों का इससे विपरीत है। इसी तरह से मुसलमान खुदा के नाम पर गौ का बलिदान पुण्य और हिन्दू, बुद्ध जैन अपुण्य मानते हैं। हिन्दू कहते हैं इन्द्रियों का नाम गौ है, इनको वश में करो और परमात्मा के मार्ग पर चलाओ यह गो बलि करो। इसी तरह से मुर्दे का जलाना, गाड़ना, पींजरे में रखना और जंगल में फेंकना इत्यादि अच्छा बुरा मानते हैं। मरने के बाद जीव का क्या होता है। यथा कर्म यथा श्रुतं के अनुसार जीव अपने खयाल से भिन्न भिन्न प्रकार की गतियों को प्राप्त होता है जो वास्तव में नहीं है। एक संस्कृत का लिखा पढ़ा पण्डित जब मर गया और कुछ देर के पीछे जिन्दा हो गया उससे पूछा कि तैंने क्या देखा तो कहा कि मुझे दो यम के दूत यम पुरको ले गये। वहां यमराज एक बड़े सुन्दर सिंहासन पर बैठा हुवा था, उनके माथे पर श्वेत चन्दन था, गले में श्वेत पुष्पों की माला थी, लाल कुर्ती थी और पैंतड़क भैंसा थोड़े फासले से खड़ा हुवा था। उन्होंने वही देख कर कहा कि इसका हुकम अभी नहीं है इसे नीचे डाल दो। मैं नीचे डाल दिया गया और जैसे स्वप्न में कूवे में या तालाब में गिरते हुये भय होता है और फिर गिरते हुवे धरती में या जल में पहुंचते ही निद्रा आ जाती है ऐसे ही नींद आगई जब वह खुली और होश आया तब सबने कहा कि जिन्दा हो गया। मैंने मर कर यह देखा। एक

मुसलमान एक बार मर गया उसने कहा मुझे दो आदमी पकड़ कर कबरों में ले गये। उनमें छोटी छोटी कोठड़ी और कमरे भी थे। उसमें एक हाकिम बैठा हुवा था और वहां के रहने वाले पुण्यात्माओं को अच्छा भोजन और अच्छी जगह थी। दूसरों के हाथ में काले पर्चे थे। जिनको यहां काजी मौलवी और बहुत अच्छे आदमी समझते थे वहां उनको छोटी२ कोठड़ी, चार२ रोटी, बदना, थोरिया मिले हुवे थे। और जो सीधे साधे थे, मजहब का पक्ष, नमाज, रोजा कुछ नहीं जानते थे जिनको यहां बुरा कर्म करने वाला कहते थे उनको अच्छे कमरे और अच्छा खाना, आराम के साथ रहना मिलता था। वहां पर मुझे खड़ा किया। कबरों के अफसरने कहा कि इसका हुकम नहीं है इसे ले जाओ। इस तरह से मैं मर गया था फिर मुझे होश आगया। मेरी स्त्री ने समझाया था कि यह सो गया है। तब मुझे पूछा क्या हाल है, मैं ने सब वृत्तान्त कह सुनाया। ऐसे ही मरने के समय मरने से कुछ पहले जैसी सवारी वाहन आदिक सुने हैं वैसे ही खयाल से दीखने लग जाते हैं। जो यह समझता है कि मैंने पाप किये हैं उनके लिये भैंस, ऊंट, लद्दा, बहली, आदि घटियल सवारी लेकर यम के दूत आते हैं और पुण्य कर्म करने वाले के लिये रथ, पालकी, पिन्नस, विमान इत्यादि पार्षद लेकर आते हैं। अब एक मनुष्य प्लेग में मरने लगा तो उसे पार्षद मोटर लेकर आये और कहा कि मोटर में बैठले और चल। ऐसे देखने वाले प्रायः जीते नहीं हैं। इससे सिद्ध है कि मनुष्य ने जो कुछ कर्म किया है और उस के विषय में जैसा सुना है वह अपने संकल्प से आप ही दीखने लग जाता है वास्तव में कुछ नहीं है जैसे वायु की बीमारियों में, स्वप्न में इन्द्रियों के विकृत होने पर झूठी शकल सूरत, लोक परलोक भासने लग जाता है और जब मनुष्य को यह निश्चय हो जाता है कि एक परमात्मा पूर्ण ब्रह्म, ज्योति स्वरूप, निराकार, निर्विकार, शान्तात्मा अपना सर्वस्व है और मैं अपने उसी स्वरूप को प्राप्त हूंगा, उसीसे आया हूं, उसके अतिरिक्त कुछ नहीं है वह परमात्मा को ही प्राप्त हो जाता है। यह जीव परमात्मा से बिछुड़ कर माता पिता के गर्भाशय में होता हुवा बाहर आता है। माता पिता के कर्मों को भोगता है और माता पिता सन्तान के कर्मों को भोगते हुवे मनुष्य लोक में रह कर क्रमशः परमात्मा को प्राप्त हो जाते हैं और कुछ भी झगड़ा नहीं है। उपनिषदों में कहा है कि यह जीव जन्म धारण करता हुवा शरीर को प्राप्त होता हुवा सारी बुराइयों से युक्त हो जाता है। मरता हुवा शरीर को छोड़ता हुवा सारी बुराइयों से मुक्त हो जाता है।

"एतेभ्यो भूतेभ्यो समुत्थाय तान्नेवानुविनश्यति न प्रेत्य संज्ञा अस्ति इत्यहोवाच याज्ञवल्क्य ॥"

याज्ञवल्क्य ने कहा यह जीवात्मा इन भूतों के साथ प्रकट होता है और भूतों के पृथक् होने पर परमात्मा में मिल जाता है। मैत्रेयी ने कहा "आप मुझे मोह में डालते हैं जो कहते हैं कि मर करके दूसरा जन्म नहीं होता। उन्होंने कहा कि मोह से या मोह में डालने वाली बात नहीं कहता हूं। यह आत्मा अविनाशी है, मर करके इसी को प्राप्त होता है, समझदार के लिये इतना ही उपदेश पर्याप्त है। ऋषियों से कहाः-

'जात एव न जायते कोन्येनं जनयेत् पुनः विज्ञानमानन्दं ब्रह्म'।

पैदा हुवा यह मर करके फिर पैदा नहीं होता। अपने स्वरूप विज्ञान और आनन्द में लय हो जाता है। मरते समय स्थूल शरीर पृथिवी में, प्राण वायु में, अग्नि अग्नि में। आकाश आकाश में, इन्द्रियें अपने देवताओं में, घ्राण पृथिवी में, नेत्र सूर्य में, मन चन्द्रमा में, अहंकार रुद्र में इत्यादि देवता अपने देवताओं में मिल कर अमर हो जाते हैं। ऐसे ही आत्मा परमात्मा में मिल कर अमर हो जाता है यही बात शाण्डल्य ने छान्दोग्य उपनिषद् में कही है। रह गये पाप पुण्य वह ज्ञानी के ब्रह्मात्मैक्य रूप ज्ञान से नष्ट हो जाते हैं। अज्ञानियों को यथा कर्म या श्रुतं के अनुसार सूक्ष्म शरीर में भोग लिये जाते हैं। इसलिये सब मनुष्यों को जानना चाहिये कि हम परमेश्वर से आये हैं और परमात्मा को ही प्राप्त होंगे। सब कुछ आत्मा ही आत्मा है। वही परमात्मा है और सब कुछ भ्रम है। इससे आत्मा का कुछ बनना बिगड़ना नहीं है। इसलिये परमात्मा की भक्ति करो, परोपकार जो कुछ हो सके परमात्मा की प्राप्ति के लिये करो। पैरों से तीर्थ व महात्माओं के दर्शन करने के लिये चलो वहां से तुमको यथार्थ ज्ञान होगा। हाथों से श्रेष्ठ पुरुषों को पूज्य दृष्टि से, दुःखी दीनों को दया दृष्टि से दान करो। परमात्मा के नाम पर। वाणी से उसके गुण, उसका नाम यह सच्चा उपदेश करो। मन से निश्चय पूर्वक उसी को मानो और उसी एक की पूजा करो। चित्त से बार बार उसके स्वरूप का चिन्तन करो। बुद्धि से उसी का निश्चय करो। अहंकार से वह परमात्मा मैं ही हूं। ज्योति स्वरूप, निराकार, निर्विकार निष्क्रिय, निर्गुण, मन इन्द्रियों से अगम्य, जगत् निषेदावधिभूत, नेति करके कहा हुवा वह वास्तव मेरा ही स्वरूप है। आंखों से जो कुछ दीखता है, मन से जो मनन किया जाता है, कानों से जो सुना जाता है, बुद्धि से जो निश्चय किया जाता है, त्वचा से जो स्पर्श किया जाता है, जिह्वा से जो रस लिया जाता है, घ्राण जो गन्ध ली जाती है वह सब का सब परमात्मा अपना ही आत्मा है। इस ज्ञान से जो बड़े से बड़ा मोक्षधाम है उसको तुम स्वयं प्राप्त हो जावोगे। जो कुछ तुम इस मनुष्य जन्म में सिद्धि और करामात या जो कुछ चाहते रहते हो सूक्ष्म शरीर में स्वतः सिद्ध प्राप्त हो जांयगी। तुम मर कर देवता बनोगे, गन्धर्व बनोगे। यदि तुम्हारा निश्चय डांवाडोल होगा तो भूत, प्रेत और पितर बन जाओगे। इन सब को अष्ट प्रकार की सिद्धि और नव निधि प्राप्त हैं। तुम ऊपर ही ऊपर को सूक्ष्म से सूक्ष्म उन्नति करते जाओगे नीचे को कभी न गिरोगे। जिसके लिये यह सृष्टि रची गई देवता, नर, पितर सब ने जिसके देखने के लिये यत्न किया, सब की माताओं ने उदर में इसको धारण कर कष्ट उठाये सारे के सारे काम, मनोरथ सफल हुवे। सब मनुष्यों को मरने पर खुशी और उत्सव मनाना चाहिये। रोना, धोना, रंज फिकर नहीं करना चाहिये। जब गंगा जी ने अपने सातों पुत्र गंगा में डुबा कर मार दिये तब राजा शान्तनु बड़ा दुःख मान कर अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ते हुये कहा तू इनको क्यों मार देती है? तुझे क्या दया नहीं आती? तब गंगाजी ने कहा कि मैंने इनको स्वर्ग को पहुंचा दिया है। इस संसार में ऐसी उलटी रिवाज है कि जब किसी का सम्बन्धी कारागार में बद्ध हो तब तो खुशी और उत्सव मनाते हैं,

साथिया काढते और ढोल बजाते हैं, दान पुण्य करते हैं इत्यादि आनन्द मनाते हैं और जब कारागार से मुक्त हो कर उत्तम पद और स्थान को अर्थात् अपने घर को आते हैं तब रोते, चिल्लाते और शोक मनाते हैं। नहीं तो यह समय आनन्द मनाने का है यह रंज मनाने का है। संसार की उल्टी रीति है। इसको देख कर कबीर महात्मा भी रो पड़ा।

चलती को गाड़ी कहैं तत्व माल को खोवा।
उलटी रीत संसार की देख कबीरा रोवा॥

कबीर वह दोहा फिर कहते हैं:-

जां मरने से जग डरे मोय बड़ो आनन्द।
कब मरहुं कब पाय हों पूरण परमानन्द॥

जब मनुष्य बहुत जोर से भगते २ थक जाता है तो उसको धीरे चलने में आनन्द आता है उससे अधिक बैठ जाने में और उससे अधिक सोने में और उससे ज्यादा बेहोशी (मरने) में एक आदमी जब मरने लगा तब उसने कहा कि जब मनुष्य मरने लगता है तो सौ बिच्छु काटने का दुःख होता है यह बात अब नितान्त झूठी निकली अब मैं मरने को हो रहा हूं अब मेरे श्वास नाभि पर न जा कर ऊपर से ही लौट आते हैं और मैं एक बेहोशी शून्य में मानों समाता जैसा हूं और बड़ी शान्ती, शीतलता और आनन्द का अनुभव करता हूं। मरते हुये पुरुष की वाणी मन में लय हो जाती है और मन परमात्मा में लय हो जाता है। मृत्यु क्या है अजर अमर होना है। ओं ओं ओं कह कर सृष्टि उत्पन्न हुई। सोऽहं सोऽहं कह कर उसी में लीन हो गई। हम न तुम तो दफ्तर ही गुम। एक आनन्द ही आनन्द स्वरूप परमात्मा है।

"आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयन्ति अभिसंविशान्ति॥"

आनन्द से ही सब की उत्पत्ति होती है। उत्पत्ति होकर सब आनन्द से ही जीते हैं। मरते हुये आनन्द को ही प्राप्त हो कर उसमें लय हो जाते हैं। तुम जानते ही हो माता पिता को एक साथ जब आनन्द आता है तब ही जीव की उत्पत्ति होती है। आनन्द के सहारे ही आनन्द की आशा पर प्राणी जीता रहता है अन्त को आनन्द में ही लीन हो जाता है। यही ब्रह्म है ऐसा जान।

"ब्रह्मवित् ब्रह्मैव भवति"

ब्रह्म के जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है।

'न तस्य प्राणः उत्क्रामन्ति ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति'।

जिसकी कामना सब पूरी हो गई हैं, जिस को केवल ब्रह्म ही की कामना है उसके प्राण उत्क्रमण नहीं करते। वह यहां ही ब्रह्म होकर ब्रह्म को प्राप्त होता है।

———

परमात्मा और परामत्मा का उपदेश

आत्मा और परमात्मा क्या वस्तु हैं, यह कैसे जाने जाते हैं ? प्रत्यक्ष प्रमाण से वा अनुमान वा शब्द प्रमाण से। यदि कहो प्रत्यक्ष से। प्रत्यक्ष तो इन्द्रियों के बिना रुकावट विषयों के सम्बन्ध से न बदलने वाला निश्चय ज्ञान है। प्रत्यक्ष ज्ञान के पीछे अनुमान (अनुमीयते यदनुमानम्) कार्य को देख कर कारण का, कर्म को देख कर कर्ता का अनुमान होता है। जैसे सृष्टि में क्रमबद्ध, तरतीबवार और तरतीब और नियम पाया जाता है नियम और क्रम कर्म वाची होने से इनका कर्ता अवश्य है। घट घड़ा, पट वस्त्र, मठ मकान इत्यादि कार्य और बनावटी होने से इनका कर्ता बनाने वाला) अवश्य है और वह चैतन्य ज्योति है। ऐसा ठीक ज्ञान अनुमान है। यर्थार्थ ज्ञानी और यथार्थ वक्ता कहा हुवा वचन शब्द प्रमाण है। इन तीन प्रमाणों से प्रमेय की सिद्धि होती है। जीवात्मा और परमात्मा के बीच में प्रकृति आ जाने से दो कहे जाते हैं। वास्तव में एक हैं। एकैव शुद्ध चैतन्य माया और अविद्या की उपाधि से ईश्वर, सर्व शक्तिमान् और सर्वज्ञ तथा जीव असर्व शक्तिमान् और अल्पज्ञ हुवा प्रतीत होता है। जब एक ही चैतन्य पर दृष्टि जाती है और उसीका ध्यान होता है और मैं वही शुद्ध ब्रह्म हूं इस ज्ञान से माया और अविद्या रूपी उपाधि भ्रम रूप अन्धकार ऐसे नष्ट हो जाता है जैसे सूर्योदय होने पर रात। फिर जीव कृतकृत्य (मोक्ष) हो जाता है। यही मनुष्य जीवन का मुख्योद्देश्य है, यही लक्ष है। प्रत्यक्ष प्रमाण से भी ईश्वर की सिद्धि होती है। मानसिक और वैज्ञानिक भी योगियों का प्रत्यक्ष प्रमाण है। योगी परमात्मा का साक्षात् दर्शन करते हैं। नास्तिक जब परमात्मा के अस्तित्व से न कार करता है उस समय उसके मन में आस्तिक की भान्ति परमात्मा का खयाल बना रहता है। इससे सिद्ध है कि मन द्वारा उसका प्रत्यक्ष है। वेद में लिखा है "परमात्मा देखने योग्य है, सुनने योग्य है और मानने योग्य है।"

मनसैवाव द्रष्टव्यं नेह नानास्ति किंचन। आत्मावारे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः।

आत्मा शुद्ध मन से देखना चाहिये देखने के साधन उसका श्रवण, मनन और न दिध्यासन हैं। जैसे शरीर सहित आत्मा का सब इन्द्रियों से प्रत्यक्ष होता है ऐसे ही ब्रह्माण्ड सहित परमात्मा का भी प्रत्यक्ष होता है।

"पिण्डे सो ब्रह्माण्डे"

सब प्रमाणों से एक अद्वितीय ब्रह्म ही सिद्ध होता है उससे भिन्न कोई नहीं है। वह ब्रह्म मैं ही हूं इस ज्ञान का परमात्मा उपदेश करते हैं। इस ज्ञान के मानने के लिये और इसी की प्राप्ति के लिये सारे कर्म और सारी चेष्टाएँ करनी चाहियें। शुद्धाकांक्षा से उसकी आज्ञा माननी चाहिये। उस की आज्ञा यह ही है कि सब को अपना ही आत्मा

समझो। सब की भलाई के लिये और सब के सुख के लिये कर्म करो और प्रार्थना करो। परमात्मा को जो अपना ही आत्मा है बार बार नमस्कार करो, हाथ जोड़ कर शिर झुकाओ और लाख लाख धन्यवाद दो जिसने हमको मनुष्य जन्म, ऐसे ज्ञान सुनने का अवसर और सारी सृष्टि के पदार्थ प्रदान किये हैं। जब मनुष्य भ्रम में पड़ जाता है तो उसको भी भगवान् सीधे रस्ते में ले आते हैं। उसको उसका चिन्तन चाहे प्यार से चाहे बैर से हो। एक मनुष्य जब भ्रम के चक्कर में आया तो कहने लगा परमात्मा कोई चीज नहीं है। यदि है तो वह ज्ञान शक्ति नहीं प्रत्युत अज्ञान की शक्ति है। जब वह बागड़ में पहुंचा तो तरबूजे और उसकी बेल को देख कर कहा कि यदि भगवान् होता तो उसे इतनी भी बुद्धि न थी कि इतनी छोटी बेल से इतना बड़ा २० सेर का फल लगाया यह फल तो बड़ पीपलों के लगाना चाहिये था, इसी तरह से जहां आज एक बदल बर्ष जाता है कल भी वहां ही बर्षने को जाता है! एक बदल बर्षते ही सारे बदल उसकी तरफ चले जाते हैं। उनको यह ज्ञान नहीं कि कहां और कितना पानी बरसावें। एक भेड़ कूवे में गिरने को जाती है तो सारी भेड़ उसके पीछे चलती हैं। इसी तरह से सारी सृष्टि में भेड़ा चाल है। ऐसा विचार करते करते उसने एक बड़ के पेड़ के नीचे आकर विश्राम किया। बड़ के फलों देख करके तो और भी भगवान् का अनिश्चय हुवा, इतने ही में एक पक्षी ने बड़ के फल को काटा तो वह उसकी नाक की ऐसी नस पर पड़ा जिससे उसका सारा शरीर भन्ना उठा और इससे उसके हृदय की आंख खुल गई, वह सांजलि शिर झुका झुका कर परमेश्वर को नमस्कार करने लगा और उसका धन्यवाद गायन करने लगा कि हे परमेश्वर! तू जानता था कि बड़ के नीचे तो मनुष्य आकर विश्राम और शयन करते हैं बेल के नीचे नहीं। आज यह फल मेरी बुद्धि के अनुसार यदि बड़ से लगा हुवा होता तो बस खातमा ही हो जाता। इसीलिये इस देश में परमात्मा ने ऊंटों की गर्दन लम्बी बनाई है कि वह वृक्षों के पत्तों से पेट भरलें। तू जानता है कि यहां इतना बर्षना चाहिये यही भले के लिये है। तेरी इच्छा, तेरा काम जीवों के भले के लिये होता है अपने लिये कुछ नहीं, इस तेरी इच्छा और काम के साथ में हम अपनी इच्छा और काम मिलावें। हमारी इच्छा कुछ न हो, तेरी ही इच्छा को परम इच्छा मान कर काम करें और कहें कि परमात्मा तेरी इच्छा पूर्ण हो मैं अपनी इच्छा इसी लिये कहता हूं कि वह तेरी इच्छा है।

सर्वात्मकोऽहं सर्वोऽहं सर्वातीतोऽहमद्वयः।
केवला चण्ड बोधोऽहं स्वानन्दोऽहं निरन्तरः॥

मैं सब का आत्मा हूं, सर्व रूप हूं और सर्वातीत शुद्ध स्वरूप हूं। एक राजा कहता था कि परमात्मा नहीं है अपने पुरुषार्थ से ही मैं राजा हुवा हूं। इसी तरह से पुरुषार्थ करके सब राजा हो सकते हैं। सब वस्तुयें प्राप्त कर लेते हैं, परमेश्वर की दया और दातृ शक्ति से हमको यह पदार्थ नहीं मिले हैं। इसलिये वह किसी भी वस्तु के मिलने पर परमेश्वर का धन्यवाद और नाम नहीं लेता था। सब को कहा करता था कि परमात्मा नहीं है। उसका नाम जप कर वृथा जीभ को क्यों थकाया करते हो। इतने समय में और पुरुषार्थ करते तो अधिक फल पाते। लोगों से कहता कि यदि मकान के देखने से मकान वाले का ज्ञान होता है।

हिमालय पर्वत पर बिना बनाने वाले के आप ही बर्फ से कितने ही मकान बनते हैं और ढह जाते हैं। बादल वर्षा ऋतु में अनेक आकार धारण करते हैं कोई गणेश का, कोई हाथी का, कोई गाय का, कोई और किसी मनुष्य का। पानी के वर्ष ने से बहुत सी औषधी, वनस्पति आदिक उत्पन्न होती हैं और आप ही नष्ट हो जाती हैं। यवादि के सड़ जाने से या परिणत होने से मद्य शक्ति उत्पन्न होती है ऐसे ही चार तत्वों के परमाणु इकट्ठे हो जाने से और परिणत होने से जीव शक्ति पैदा हुई है। इनकी क्रिया बदल जाने से या बन्द हो जाने से इनसे उठ कर इन्हीं में समा जाती है जैसे डले की आल डले में सूख जाती है। ऐसे ही जड़ में से चेतना उठ कर जड़ ही में लीन हो जाती है। परमात्मा कुछ नहीं वह एक डराने का हव्वा या भूत बना लिया है और उसकी बातों की कथा रचली है, न ग्रन्थ बनाये हुये हैं। खावो पीवो मौज उड़ाओ ऋण करके भी घी पीवो। जब यह शरीर भस्मी भूत हो गया तो देने लेने वाला कहां रहा। इस देह से पृथक् निकल कर जाता तो अपने इष्ट मित्र व कुटुम्ब के स्नेह से फिर लौट आता। ऐसा नहीं है। जब आवेगा अन्त ऐसा ही गधा और ऐसा ही सन्त। ऐसे २ उपदेशों से आस्तिक पुरुषों का जी दुखने लगा। वह सब एक मत होकर राजा को समझाने लगे। परन्तु उसकी एक समझ में ना आई। फिर राज्याधिकारी और उसके शुभ चिन्तकों ने वनों में जाकर वानप्रस्थी ऋषियों से निवेदन किया कि हमारा राजा नास्तिक हो गया है आप चल कर उसको उपदेश करें जिससे राजा प्रजा सब का भला हो। वे आये और उन्होंने बहुत सारा उनको उपदेश किया उसने उनके सामने एक तृण रख दिया और कहा कि यदि परमात्मा है तो इसे हिलादे। है तो वह कहता क्यों नहीं कि मैं हूं, क्या उसमें यह शक्ति नहीं है इत्यादि बेढंगी दलीलों से उनका निरादर किया। उन्होंने राज कर्मचारियों को कहा कि अब इसके उलटे ज्ञान की नदी चढ़ रही है। चढ़ी नदी पर इन्जीनियर को पुल नहीं बान्धना चाहिये। जब ठिकाने आजावे तब पुल बान्धने का यत्न शीघ्र सिद्ध होता है। मूर्ख एक ही अध्यापक से सीखता है और वह है आपत्ति। सहस्र टक्कर लग करके एक बुद्धि आती है। तुम सब एक मत करके इसके भाई का राज्याभिषेक करदो और इसे नदी से उतार दो। उन्होंने ऐसा ही किया। नये राजा ने हुकम दिया कि यह मेरे राज्य से खाली हाथ जान बचा कर चला जाय नहीं तो मार दिया जायगा। तब वह अपनी बुद्धि पर विश्वास करके राज्य से बाहर चला गया। उसके इष्ट मित्र किसी ने भी उसका साथ नहीं दिया। एक वेश्या उसके साथ गई। उसने उसको कहा कि यदि आप भगवान को मानते तो इतना दुःख क्यों उठाना पड़ता। उसने कहा अब बुद्धि से पुनः पुरुषार्थ करेंगे और इससे फिर राजा बन जायंगे धैर्य धरो, मत डरो। वह वन में रहने लगा और ऋषियों से भिक्षा मांग कर निर्वाह करने लगा। एक रोज किसी ने कहा कि तुम्हारे भाई को ज्ञान हो गया है कि वह ऋषियों का अन्न खाता है जिससे ऋषियों को दुःख होता है वह यह सुन भयभीत हो कर वहां से भी चला गया और सोचने लगा कि अब मेरे पास एक ही कम्बल रह गया है। वेश्या को उढादे तो आप अग्नि से तापै। एक रोज जब वेश्याने उसे बहुत कहा कि परमेश्वर के न मानने का फल ऐसा ही दुख और आपत्ति है। उसने कहा परमात्मा है ही नहीं तो उसको माने

कैसे ? देख अब हम बुद्धि से पुरुषार्थ करेंगे। पहले हम चोरी करके धन लायेंगे उससे नौकर रक्खेंगे फिर डाका देंगे और बहुत से धन जन से समृद्ध हो कर राजा बन जायेंगे। लकड़ी लाकर, आग जला कर उसको आश्वासन दे कर और कम्बल लेकर चोरी करने चला। एक नगर में जाय एक मकान बहुत धनाढ्य का बुद्धि से विचार उसमें सेंध लगाई किसी को मालूम न हो इस ख्याल से उसमें कम्बल ठूंस दिया और लगा मकान में धन टटोलने। तब एक हृष्ट पुष्ट मनुष्य जागा और कहा कौन है कौन है ? वह डर से जल्दी किवार खोल कर भागा और कम्बल भी वहीं रह गया। अब भयभीत हो कर सोचने लगा कि मैं जो कुछ भी करता हूं वह पूरा क्यों नहीं होता। मेरी इच्छा के विरुद्ध करने वाला परमात्मा कोई अवश्य है। तब वह परमात्मा की प्रार्थना करने लगा, अपने किये का पश्चात्ताप किया, तड़फ कर और बिल बिला कर कहने लगा हे परमेश्वर ! मैं तुम्हारा हूं और तुम्हारी शरण हूं। त्राहिमां त्राहिमां। अब मैं तुम्हें कभी न भूलूंगा। अब तुम्हारा नाम जपूंगा, भजन करूंगा, ध्यान धरूंगा और तुम्हारे सब जीवों की सेवा करूंगा।" वह ऐसा ही करने लगा। लोगों में जब उसके भजन भाव की प्रसिद्धि हुई तो फिर उसको राजा बना दिया। इसलिये जो महात्मा और ऋषिमुनियों के उपदेशों को नहीं मानता और उपदेश का असर नहीं होता आपत्ति उसको ठीक कर देती है। इस वास्ते भगवान का भजन, स्मरण, नाम कीर्तन, ध्यान, आराधन, पूजन इत्यादि जल्दी ही सीखना चाहिये। बहुतेरे मनुष्य परमात्मा को मानते हैं कि वह कोई चीज़ जरूर है, ज्योति हो, शक्ति हो, प्राकृतिक हो या अप्राकृतिक, वह जगत् से बनी हो या जगत् उससे। चर्कादि में औजार बाल की खाल उतारने वाले थे उससे भी सूक्ष्म आज कल विद्यमान हैं। एक वैज्ञानिक ने दीवे की ज्योति के एक जर्रे को पृथक् कर उसके आवरण उतारे अन्त में परमाणु के भीतर एक ज्योति (ताकत) दिखाई दी और उसको उसने परमेश्वर माना। कोई अपने गुरु को, कोई अपनी बुद्धि को, कोई निसंग आत्मा को, कोई किसी को कोई किसी को परमात्मा अवश्य मानते हैं। चाहे वह आस्तिक हो अथवा नास्तिक कभी कभी अस्तिक की अपेक्ष नास्तिक ज्यादा भगवान् का स्मरण करते हैं। वे शीघ्र मुक्त हो जाते हैं। एक राजा महात्मा के सत्संग में जाकर उनसे प्रार्थना करने लगा कि कोई ऐसा उपाय बतलाओ जिससे परमात्मा न भूलें। उन्होंने कहा आज से परमात्मा का नाम न लेना। उसने ऐसा ही दृढ़ कर लिया। थोड़े दिन पीछे सब को मालूम हुवा कि यह राजा परमेश्वर का नाम नहीं लेता है तो सब आस्तिकों को और विशेष कर उसकी रानी को जो बड़ी भक्त थी और नाम स्मरण करती थी दुःख हुवा। सब ने राजा से परमेश्वर का नाम कहाने के लिये यत्न किया। एक दिन एक हर लाकर राजा से पूछा कि इसका क्या नाम है। उन्होंने समझा जब राजा हर कहेगा तो हर महादेव का नाम है तो यह भगवान का नाम इसके मुख से निकलेगा। परन्तु उनके मुख से न निकला उन्होंने कहा कि यह काष्ठ यन्त्र है, कृषि कर्षण यन्त्र है। उनसे नाम लिवाने के लिये अनेक यत्न करते थे। वह राजा रात और दिन परमात्मा का और उसके नाम का ही चिन्तन करता रहता था कि कहीं मुख से बाहर न निकल जाय। एक दिन स्वप्न में उसके मुख से राम नाम सहसा निकल गया। तब तो रानी सुन कर बहुत प्रसन्न और प्रफुल्लित

हुई। उठते ही बहुत दान पुण्य और उत्सव मनाने लगी, क्योंकि वह बड़ी आस्तिक थी। उसको ऐसा करते देख राजा ने कहा कि इसका क्या कारण है जो तुम आज ऐसी खुशी मना रही हो। रानी ने कहा आप परमेश्वर का नाम नहीं लेते थे मुझे इस बात का बड़ा दुःख था। रात को स्वप्न में आपके मुख से राम नाम सुनते ही बड़ा आनन्द हुआ है। राजा ने आश्चर्यान्वित होकर कहा कि मेरे मुख से उसका नाम निकल गया क्या यह सत्य है? रानी ने उत्तर दिया हां यह सत्य है। यह सुन कर राजा तुरन्त ही पंचत्व को प्राप्त हो गया और परमात्मा में जाकर मिल गया। इसलिये नास्तिक आस्तिक, धर्मी अधर्मी, ज्ञानी अज्ञानी का बाह्य व्यवहार से पता नहीं लगता है। शत्रुता से, मित्रता से, भय से, लोभ से परमात्मा का ख्याल निरन्तर चित्त में रहे उसीसे परमात्मा प्रसन्न और प्राप्त होता है। अन्य का रहे तो अन्य को प्राप्त होता है।

जो मन नारी की ओर निहारत तो मन होत है ताहिको रूपा।
जो मन काहूसे क्रोध करे, तब क्रोध मयी होजाय तद्रूपा॥
जो मन मायाहीमाया रटे नित, तो मन डूबत माया के कूपा।
सुन्दर जो मन ब्रह्म विचारत, तो मन होत है ब्रह्म स्वरूपा॥

सति सक्तो नरो याति सद्भावं ह्येकनिष्ठया।
कीटको भ्रमरी ध्यायन् भ्रमरत्वाय कल्पते॥

जैसे भ्रमरीका ध्यान करता कीट भ्रमरत्वको प्राप्त होता है वैसे ही एक निष्ठासे ब्रह्मका ध्यान करता पुरुष ब्रह्मत्व को प्राप्त होता है। अतएव हम सबको सावधान होकर बार बार ब्रह्म का ही चिन्तन करना चाहिये। गीता में भगवान ने कहा है:—

अन्त कालेच मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥
यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भाव भावितः॥

अन्तकाल में जो पुरुष मेरा स्मरण करता हुआ देह को छोड़ता है वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है इसमें संशय नहीं है। हे कौन्तेय! पुरुष अन्त काल में जिस जिस भी पदार्थ का स्मरण करता हुआ देह को छोड़ता है वह सर्वकाल उसी की भावना वाला होने से उसी उसी पदार्थ को प्राप्त होता है।

सब मनुष्यों के लिये परमात्मा का समान उपदेश

सत्यमहं गम्भीर काव्येन सत्यं जातेनाऽस्मि जातवेदा।
न मे दासो न मे आर्यो महित्वा व्रत मीमाय यदहं धरिष्ये॥

भगवान कहते हैं हे जीवो! मैं सत्य स्वरूप, महा गम्भीर सत्य विद्या के प्रकट करने से जातवेदा हूं। मैं किसी दास वा आर्य से पक्षपात नहीं करता। जो मेरी आज्ञा को मानेगा, पालेगा, उस पर चलेगा मैं उसीका उद्धार करूंगा।

ज्ञानं सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसि पस्पृधाते। तयोर्यत् सत्यं यतरदृजीयस्तदित्सोमोऽवति हन्त्यासत्॥

ज्ञान विज्ञान के जानने के लिये दो प्रकार

की वाणी हैं सत्य और झूंठ। दोनों ही मनुष्य पर अपना प्रभाव डालती हैं। उनमें से जो सत्य है वह मनुष्य की जन्म मरण से रक्षा करती है और जो असत्य है वह मनुष्य का नाश करती है। इसलिये हठ धर्मी को, किसी मजहब की कट्टरता को और पक्षपात आदि को छोड़ कर सत्य वाणी को पकड़ो।

संगच्छध्वं संवदध्वं संवोमनांसि जानताम् देवा भागं यथा पूर्वे संजानानां उपासते ॥

एक साथ चलो परस्पर संवाद करो न कि विवाद। सब के मन की रफ्तार को देखो। उसके अनुसार मधुर हितकारी और प्रेम भरी वाणी से वर्ताव करो। तुम्हारे विचार द्वेष रहित हों, समान हों। तुम्हारी सभा में विरोध का अभाव हो। तुम्हारी जाति में एकता हो, सहानुभूति हो। ऊंच नीचता का अभाव हो। सब मिल कर उत्तम ज्ञान को प्राप्त करो। एक दूसरे के साथ मैत्री करो। अपने मन को उत्तम ज्ञान से शुद्ध करो। इकट्ठे कार्य करने वालों का मन साफ हो। सब मिल कर खाओ पीवो। प्रायः खाना पीना समान होना चाहिये।

अग्निः प्रातः सवने पात्वस्मान् वैश्वानरो विश्वकृत विश्वशम्भुः स नः पावको द्रविणे दधातु आयुष्मन्तः सह भक्षीमहि ॥ (अथर्व)

दीर्घ आयु आयु वाले मिल बैठ खाने वाले हों। परमात्मा हमारी प्रात भाग में रक्षा करे।

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्योऽन्यमभिहर्यत वत्सं जात मिवाघ्न्या ॥

तुम्हारे अन्दर सहृदयता मन की शुद्धता और अद्वेष को स्थापित करता हूं। तुम एक दूसरे से उसी प्रकार प्रीति पूर्वक व्यवहार करो जैसे नये उत्पन्न हुवे हुवे अपने बछड़े से गौ प्यार करती है।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु सम्मनाः।
जायापत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम् ॥

पुत्र पिता का अनुव्रत हो, माता के कारण पुत्र शुद्ध मन वाला हो। पत्नी अपने पति से मधुर और शान्ति कारी वाणी बोले।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यं चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ॥

भाई से भाई द्वेष न करे, बहन से बहन द्वेष न करे। उत्तम और सव्रत होते हुवे तुम परस्पर कल्याणकारी वाणी से बोलो।

समानी प्रपा सहवो अन्न भागः समाने योक्त्रे सहवो युनज्मि।

तुम्हारा अन्न का भाग समान हो। मैं तुम को एक ही धुरे में जोड़ता हूं।

समानो मन्त्रः समितिः समानि समानं व्रतं सह चित्तमेषाम्।

तुम्हारे विचार समान अर्थात् द्वेष रहित हों। तुम्हारी सभा में एकता हो, तुम्हारा व्रत अर्थात् कार्य समान हो तथा तुम्हारा चित्त समान हो जिस करके आपस में सहानुभूति संवेदना, हमदर्दी, परस्पर प्रेम भाव, परमेश्वर की भक्ति बढ़े वही काम करो। जो तुम अपने लिये चाहते हो वही दूसरों के लिये करो। क्योंकि सब तुम्हारे ही आत्मभूत हैं। दूसरे से वर्ताव कूप की वाणी की तरह का है। जैसा कहोगे वैसी प्रतिध्वनि होगी। एक ऋषि ने दूसरे ऋषि से कहा कि अमुक ऋषि बड़ा खराब है। उसने शान्ति से और

प्रेम से कहा कि क्या आप आज कल सब दोषों से रहित व सब से अच्छे हो विचार कर सत्य कहो ? ऋषि ने कहा कि सच तो यह है सब आत्माओं का आत्मा मैं हूं मैं अपने को शुद्ध पाते ही सबको शुद्ध पाता हूं। जैसे रंग की ऐनक से देखता हूं वैसा ही दीखता है। सब मनों का मन मैं हूं। जो कुछ यह जीव कर्म करता है वह अपने ही लिये होता है। दूसरे की निन्दा, करनी अपमान करना अपनी ही निन्दा और अपमान है। जब यहां के पुजारियों ने शूद्रों का अपमान और बुराई की "हीनं दूषयति इति हिन्दू" वाली कहावत, अक्षरसः चरितार्थ की तब उस दुःख से दुःखी हो कर और मर कर काबल, गजनी तातार में पैदा हुवे। उनको बदला लेने का संस्कार था। इससे उन्होंने मन्दिरों को नष्ट किया, दुःख दिया और गुलाम बनाया यह यवनों का अपराध नहीं था किन्तु अपने ही पूर्वले जन्मों के किये हुवे कर्मों का फल था। मनुष्य अपने ही किये का फल भोगता है। परमात्मा किसी को पाप पुण्य नहीं समझता। जीवों का जीवों के साथ में बर्ताव पाप पुण्य कहलाता है। किसी को दुःख दिया, अपमान किया तो वह बदला लेना चाहेगा। परमात्मा ऐसी वस्तु है जिसके आधार से चाह पूरी होती है। हम भलमनसाहत का और अच्छा बर्ताव यदि दूसरों के साथ बर्तेंगे तो वे भी हमारे साथ में वैसा ही बर्तेंगे। इस बात से भी हमें यही समझना चाहिये कि परोपकार, सब की बड़ाई, सबके लिये हितकारक प्रार्थना जो अपने लिये चाहे वही दूसरे के लिये बर्तें वेद में आत्मज्ञानी की यह पहचान है:-

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्व भूतेषु चात्मानं ततो न विजिगुप्सते॥

जो सारे भूतों को अपने में और अपने आत्मा को सारे भूतों में देखता है वह किसी से नफरत व ग्लानी नहीं करता है, किसी की निन्दा नहीं करता है। शोक मोह से रहित हो जाता है। एकत्व देखने वाले के लिये शोक मोह भला कहां ठहर सकते हैं।

यस्मिन्सर्वाणि भूतानि आत्मैवा भूद् विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः॥

जिस अवस्था में सब कुछ अपना आत्मा ही हो गया। सब में एकता देखने वाले के लिये शोक मोह कहां। सब में एकता स्थापित करो। यह अपने आधीन नहीं। इसके दूर करने के लिये परमेश्वर से प्रार्थना करो और यथा साध्य यत्न करो तो अवश्य दूर करने में कृतकार्यता होगी।

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता सम दर्शिनः॥
(इति भगवद्वचनम्)

विद्या विनय सम्पन ब्राह्मण में, गौ में, हाथी में, कुत्ते और चाण्डाल में जो समदर्शी हैं वह ही पण्डित हैं। बुद्धिमान् सब को समानता से देखे और यथायोग्य बर्ते। हारी को उसकी मा चूरमा देती है, बुखार वाले को मौठ की दाल और उपदेशक को खीर खुलाती है। जैसे माता उसके शरीर की शक्ति के अनुसार बर्तती है ऐसे ही सब के साथ सब बर्तें और सब का सब भला चाहें तो सब का भला ही होगा। हे परमेश्वर! मुझ से सब का भला हो मैं सब का आत्मा सर्व रूप हूं। भगवान् की आज्ञा है "सर्वोहमस्मीति उपासीत तदव्रतम्" यह सब कुछ मैं हूं यह उपासना करे।

"सर्वं खल्विदं ब्रह्म नेह नानास्ति किंचन।"

"ईशावास्य मिदꣳ सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्"।

यह सब कुछ ब्रह्म है। इसमें नाना पन कुछ नहीं। इसी से पानी से तरंगवत् उत्पन्न हुवा, इसी में चेष्टा करता है और अन्त में इसी में लय हो जावेगा। जो कुछ तीनों लोक और चौदह भुवनों में चेष्टा गति करने वाला जगत् है स्थावर जंगम ब्रह्मा से लेकर पिपीलिका पर्यन्त परमेश्वर रूप देखो। नाम रूप मिथ्या हैं, सत् चित् आनन्द रूपी ब्रह्मात्मैक्य ज्ञान सत्य है। यह सत्य अपने जीवन में जीवित ही बार बार कहना चाहिये। जो मरने पर कहा करते हो "राम नाम सत्य है सत्य बोलो सत्य है।" वेद कहते हैं पृथिवी में जो जगत् है उसको ईश्वर के प्रेम से आच्छादित करदो, ईश्वर सबमें व्याप्त है, सब कुछ ईश्वर रूप है। "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा" जगत् के त्याग से और ईश्वर रूप से भोगो "मागृधः कस्य स्विद्धनं" कीसी के धनकी इच्छा मत करो। क्षुधा निवारण भोजन शीत निवारण वस्त्र छोड़कर धनकी इच्छा मत करो। सब कुछ परमेश्वर है जो आंख से दीखता है, कान से सुना जाता है 'तत्त्वदात्मेति भावयेत्' वह सब अपना आत्मा ही है यह भावना करे जो यह साकार ज्ञान है नील, पीत, हरित, लोहित अनेक रंगों वाला पृथिवी, सूर्य, चान्द, तारे इत्यादि अनेक रूपों वाला अपने से भिन्न और बाहर प्रतीत होता है यह सब कुछ ब्रह्म है। वेद में कहा है "ब्रह्म वेदं अमृतं पुरस्तात् ब्रह्म पश्चात् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण। अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मै वेदं विश्वमिदं वरिष्ठम्। आत्मैवेदं सर्वं ओंकारेवेदं सर्वं ओंकारेवेदं सर्वम्"॥ अन्दर जो मैं हूं मैं हूं का ज्ञान होता है और आंख मूंदने से नील, पीत, लोहित आदि जो आकार वाला प्रकाश दीखता है, अनहद शब्द जो सुनाई देते हैं, दिव्य, गन्ध, रस, स्पर्श अनुभव होते हैं यह सब कुछ ब्रह्म ही है।

ब्रह्म निरीह निरामय निर्गुण, एक निरंजन और न भासे,
ब्रह्म अखण्डित है अब ऊपर, बाहर भीतर ब्रह्म प्रकाशे।
ब्रह्म ही सूक्ष्म स्थूल जहां लग, ब्रह्म ही साहिब ब्रह्म ही दासे।
सुन्दर और कहुमत आनहु, ब्रह्म ही देखत ब्रह्म तमासे॥

भीतर अहं ब्रह्मास्मिका चिन्तन, बाहर तत्वमसि का उपदेश सब संसार को ब्रह्मका रूप देखना। 'ब्रह्म विद् ब्रह्मैव भवति' ब्रह्म के जानने वाला ब्रह्म ही होता है। एक समय अशोक वाटिका में स्थित सीता जी ने देखा कि दो कीट स्त्री पुरुष का जोड़ा था उसमें से मादा स्त्री की मृत्यु होगई। उसके वियोग का दुःख और चिन्तन नर कीट ने ऐसा किया कि वह नर से नारी होगया। यह देख सीता बड़ी सोच विचार में पड़ गई। त्रिजटा ने पूछा कि बेटी किस सोच विचार में पड़ी हुई हो। सीता ने उत्तर दिया मात! यह कीट अपनी स्त्री के चिन्तन में नर से मादा बन गया। ऐसे ही कहीं रामचन्द्र जी भी न हो जांय त्रिजटा ने हंस कर और मुस्करा कर कहा बेटी! तेरा भी कम प्रेम नहीं है यदि राम सीता बन जांयगे तो तू रामचन्द्र बन जायगी बात वह की वही रही जड़ भरत हिरन के चिन्तन से हिरन होगया। ऐसे ही लगातार ब्रह्म के चिन्तन से जीव ब्रह्म हो सकता है।

ओं ओं ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः!

भगवद् प्रेमियों की परायणता

[ले०-श्री मती ब्रजकुमारी प्रभाकर आश्रम]

संसार के समस्त सत्व वर्ग को स्वाभाविक सतत सुखेच्छा होना अ   गन्ध है। उसी गन्ध से प्रेरित हुआ प्राणी सुख शान्ती की खोज किया करता है। जिस वस्तु को वह बहुत दूर समझता है और चिरकालानन्तर प्रयत्न करने पर भी सफल नहीं होता वह उसी के अन्तर में विद्यमान है। परन्तु वह उसे जान नहीं पाता क्योंकि आंख जैसे सब को देखती है किन्तु वह अपने को नहीं देख पाती।

जिन रसिक भगवद्‌जनों ने जिस प्रकार जैसे उसके रसका आस्वादन किया है उसको वही सहृदय जान सकते हैं जिन्होंने कि कभी उसका कुछ अनुभव किया हो। अन्य तो केवल वाणि विडम्बना ही समझेंगे क्योंकि किसी ने कहा है कि:-

सपीरनहा चेगो दामद दिले अफसुर्दारा ज़ादिद।
अदाए कावेश-नश्तर रगे बेखू चेगी दानद॥

अर्थः-संयमी पुरुष का बुझा हुआ मन तड़पने को भला क्या जानता है जैसे नश्तर चुभने की दशा रक्त हीन नस भला क्या जानती है।

अब देखिये वह कौन है जो पास में स्थित है और पाई नहीं जाती इस पर एक कविकी हार्दिक कल्पना है। कि-

खिरद रा दोश मे गुफ्तम कि ए अक्सीर दानाई।
हमत बेमग्ज़ हुशियारी हमत बेदीदा बीनाई॥
बे गोई दर वजूद आँ कीस्त की ख़ायस्तगी दारद।
कि तो बा आबरू ए ख्वेश खाके पाए ओसाई॥

कल रात मैं बुद्धि से कहता था कि ए ज्ञान की रसायन! तेरा चातुर्य बिना मस्तिष्क के है और तेरा समस्त दर्शन बिना आंखो का है। तू बतला कि इस शरीर में कौन है जो ऐसी योग्यता रखता है कि तू अपने मुख मंडल की कान्ति पर उसकी पैरों की धूली मलती है। बुद्धि कहती है कि:-

बगुफ्ता नरे मन कज़ बहरे ओ पैवस्ता मे सोज़म्।
चोदिख बिनमद आँ दर ग़ाहतम अकनू चे फरमाई॥

मेरा प्रकाश जिससे कि मैं सदैव रोशन हूं जब वह प्रगट हुआ तो मैंने अपने अस्तित्व को उस पर न्योछावर कर दिया।

वह आत्मा ही है जिससे कि यह समस्त प्रकाशमान है इसका स्वरूप सूर्य समान है वह कर्ता भोक्ता नहीं इस अस्तित्व के विशाल मन्दिर में पांच प्राणी को प्रेरणा करता हुआ विद्यमान है।

'अयमात्मा ब्रह्म' यह आत्मा ही ब्रह्म है और जो ब्रह्म है वही परमआनन्दमय है:-

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः।
अनेन वेद्यं सच्छास्त्रमिति वेदान्त डिंडिम॥

ब्रह्म सत्य है संसार झूठा है जीव ब्रह्म में वस्तुतः भेद नहीं इसी से सत् शास्त्र जानने योग्य है यह वेदान्त का ढिंढोरा है।

इधर परमाणु २ ढोल पीट कर कहता है तत्वमसि तत्वमसि 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत' उठो जागो और आत्मज्ञानियो से शिक्षा लो। यही सर्व शक्तिमान् अनन्त अपार निरूपमेय है यही सबका आदि अन्तमध्य है तीनों कालों में तीनों लोकों में प्रत्येक अणु २ में भी जिसकी सत्ता प्रवाहित है आदि में जीव ब्रह्म से ही आया है और अन्त में उसी में जाना है फिर मध्य में यह क्यों संसार की विडम्बना है।

तमआसीत् तमसा गूढमग्रे प्रकेतं सलिलं सर्व माइदं।
तुच्छ येनाम्वपिहितं यदासीत् तपस्तन्महिना जायतैकम्॥
(ऋगवेद)

अर्थ-जगत् के प्रादुर्भाव से प्रथम अन्धेरे लेटका हुआ अन्धेरा था यह सब कुछ चिन्ह-हीन द्रव के समान अवस्था में पड़ा था। यह जो कुछ फैला हुआ है उस समय असत् के आवरण में था फिर वह तत्व की तीक्ष्ण शक्ति से आस्तित्व में आया। जीव सृष्टि आदि उस अनादि ब्रह्म से हुई। और अन्त में महाप्रलय के पीछे भी उसी ब्रह्म में इस का लय है। वह ब्रह्म ही इस जीवका सच्चा सखा है वह कहता है कि-

आदम न बूदो मन बूद हव्वा न बूदो मन बूदम्।
आकम न बूदो मन बूदम मन आशिके देरी ना अम॥१॥
या नूह दर कश्ती बूदम बायूनस अन्दर अरे चाह।
अन्दर दमे ईसा बूदम मन आशिके देरी ना अम॥२॥
आजां कि अहमद बर गुजश्त अज चारों पंजो हफो इश्त।
बर इश्तमीनश मन बूदम मन आशिके देरी ना अम॥३
ऐ आफताब! ऐ आफताब! गर्मी मकुन गरमी मकुन।
बद बक जुबां खामोश कुन मन आशिके देरी ना अम॥४
शोह हकीकत बूदा अम दरिमाये हिकमत बूदा अम।
मौलाकि बाशद पेशे मन? मन आशिके देरी ना अम॥५

ए मुसलमानो! जिस समय हजरत आदम नहीं थे उस समय मैं था जब हवा भी नहीं थी उस समय भी मैं विद्यमान था। और संसार के अस्तित्व के पहले भी मैं था मैं तो सब से पुराना आशिक हूं॥१॥

किश्ती में हजरत नूह के साथ जो रहक बैठा हुआ था वह मैं ही था कूपें की सहत में यूनस के साथ मैं था और हजरत ईसा के प्राण प्रश्वास में भी मैं ही था मैं तो सब से पुराना आशिक हूं।२

जिस स्थान पर कि हजरत अहमद चौथे पांचवे सातवें और आठवें आकाश से गुजरे उस आठवें आकाश पर मैं ही था मैं तो ए लोगो सब से पुराना आशिक हूं॥४॥

ए सूर्य! ए सूर्य! बहुत तेजी गरमी मत कर, चुप होजा मैं तेरे से भी पहले का आशिक हूं॥४॥

सचाई का मैं बादशाह हूं बुद्धिमत्ता का नद अनन्त ज्ञान हूं मौला मेरे आगे क्या सामर्थ्य रखता है मैं तो सब से पहले का पुराना आशिक (प्रेमी) हूं।

वह परब्रह्म परमात्मा जीव को बार २ अपनी याद दिलाकर संसार से उन्मुक्त करा कर अपने में लय कराता है। वह कहता है जो नश्वर खंड हैं क्लेश कर्म युक्त है मैं उन सब से परे हूं यह सब कुछ भासित है वह मेरे ही प्रकाश से जसा कृष्ण भगवान् कहते हैं:-

मयिसर्वं मिदं प्रोतं सूत्रे मणि गणा इव,

मुझ में यह सब जगत् ओत प्रोत है जैसे मोती माला के धागे में। उस ब्रह्म के प्रेमी अपने

उपास्य देव की आराधना के लिये और परोपकार्थ इस संसार में वे ही अवतीर्ण होते हैं वे ही महान् आलाप इस सच्चे परमानन्द की अनुभूति करते हैं। उनकी क्रिया सदैव उसी का इंगित प्रदर्शित होता है रोम २ में उसी की ध्वनी ध्वनित होती है।

वह कहते हैं-

मन बे खुदा शौरावम कल्लाशम बदुसवायाम।
हरजाई व बेजायम इता जनूम उश्क आशकीन् ॥

मैं बेखुद (अहं भाव शून्य) आशिक प्रेमी हूं कंगाल और बदनाम हूं घर और बे घर हूं और इसी तरह से आशिकों का पागलपन हूं।

तुरा गोयम तुरा दानम तुरा बीनम तुरा ख्वानम्।

तुझे ही कहता हूं तुझे ही ही जानता हूं तुझे ही देखता हूं तुझे ही पढ़ता हूं, जो भगवत्प्रेमी होते हैं संसार उन्हें प्रायः पागल ही कहता है किन्तु इससे क्या वे तो अपने प्रियतम के प्रेम में निमग्न हैं।

ऐसे प्रेमी भक्त मंसूर हुये हैं जिनको सूली पर चढ़ाया। वह उस समय कहते हैं कि-

चढ़ा मंसूर सूली पर पुकारा इश्क बाजों को।
यह उसके बाम का जीना जो आये जिसका जी चाहे ॥

ऐ इश्कबाजो ! यह अपने भगवान् का (जीना) मार्ग है जो सच्चा प्रेमी आना चाहे वह आवे। यह भक्तों की प्रेम की पराकाष्ठा है उनको तो सिवा परमात्मा के कुछ सूझता ही नहीं अनुराग उसकी स्मृति से हृदय पूर्ण रहता है वह तो उसकी चाह में सर्वस्व आत्म विसर्जन करने में भी नहीं चूकते मीर कवि इस पर फरमाते हैं-

मर कर भी हाथ आवे तो मीर, मुफ्त है वह।
जीजी जिवाल को हम खूद जानते हैं ॥

यदि मैं उसे मृत्यु से भी पाजाऊं तो मानो मैंने उसे मुफ्त ही पालिया क्यों कि जीवन तो हमारा व्याज रूप में है फिर मूल तो कहां इसी प्रकार सूफी भक्त शम्स तबरेज़ हो चुके हैं जो सदा यह कहा करते थे कि, शब्द अनल हक़ मैं ही खुदा हूं और नहीं कुछ नामों निशां, तत्वमसि वह मैं ही खुदा हूं मेरे सिवा अन्य कुछ नहीं। उनके इस प्रकार कहने पर बादशाह ने उनकी खाल खिचवादी और कहा कि इसको कोई आश्रय न दे। खाल खिंचने पर भी यह उसी अनलहक़ २ को कहते रहे मरे नहीं। जब इनको भूख लगी तो यह सारे नगर में भूखे फिरते रहे बादशाह के डर से किसी ने भी इनको खाना नहीं दिया तब कहीं से एक हड्डी मिली किन्तु उसे भूने कैसे खाई जाय तब उन्होंने सूर्य से कहा कि ऐ सूर्य नीचे आ और इस हड्डी को भून। कहते हैं कि सूर्य नीचे होने लगा सारा संसार उत्तप्त हो चला बादशाह ने आकर इन महात्मा से क्षमा याचना की तब इन्होंने सूर्य को रोका क्योंकि, परोपकाराय सतां विभूतयः, परोपकारी जनों की विभूतियां परोपकार्थ ही होती हैं यह इन महात्मा की अद्वैतता है। ऐसे २ भक्त प्रेमी उसी का रूप होते हैं। ऐसी ही अद्वैतता वा तल्लीनता ब्रज की गोपियो में थी।

वह कहती हैं-

श्याम तन श्याम मन श्याम ही हमारो धन।
आठो याम ऊधो यहां श्याम ही सों काम है॥
श्याम हिये श्याम जिये श्याम बिन नाही तीये।
आँधरे की लकड़ी अधार नाम श्याम है ॥

ऐसे ही अनेकों उस परमात्मा के भक्त अमृत पान करने वाले इस संसार में हो चुके हैं।

इस त्रिकाली संसार के अनियंत्रित प्रवाह में विद्यमान हैं जिनकी महिमा तुच्छ लेखनी द्वारा अशक्य है भाव भाषा मौन एवं शून्य हैं उनकी हृदयोद्गारावली का गान समस्त चराचार प्राणियों में ध्वनित है उनकी महद् शक्ति से ही यह समस्त संसार प्रवर्त है।

भक्त-विनोद

सूलैंगे कृपान समधान विषधर चलि, दलिमलि दुष्ट दैत्य दानव दबावैंगो।
काटैगो कराल काल की कुचाल कोर कोर, तोरि तोरि तदबीर ताकि मैं भगावैंगो ॥
काहे जिय सोचत 'सुरेन्द्र' बारि मोचि मोचि, दीनानाथ राम पीर तेरी दौरि आवैंगो,
भागैगी सकल चतुराई चित चंचल की, जब चक्रधार चक्रपति लै चलावैंगो ॥

❀ ❀ ❀

धारैगो नवीन रूप घनश्याम घनश्याम, मारैगो मलीन मन मोहिते जु मानी को।
खेलैगो खलगीर जब खलन खलगीर बीच, मचैगी पुकारि त्राहि त्राहि तेग तानी को ॥
मेलैगो विमर्दि गर्दि बैरिन अजानु बाहु, राखैगो 'सुरेन्द्र' तिन बीच [जोहि सानी को ?
देवैगो अनाथलम्ब अवलम्ब जग जीव, लेवैगो सरन रामचन्द्र ऐसो दानी को ?

सन्तो के वचन

असफलता बहुधा इस कारण होती है कि हम दूसरों से यह आशा रखते हैं कि पहले यह काम करें।

प्रतिभा और बुद्धि एकान्त सेवन से बढ़ती है परन्तु सदाचार संसार के संघर्ष में दृढ होता है।

अपने विचारों की पूर्णतया रक्षा करो, विचार आकाश में भी सुनने में आते हैं।

अधिक ज्ञान से बिलकुल अज्ञान अच्छा है। अधिक ज्ञान से दिमाग़ में वहम होजाता है।

जो मनुष्य अपने अज्ञान (भूल) को स्वीकार

करता है वही ज्ञानी है।

अपनी वाणी को वश में रक्खो ऐसा न हो कि तुमको अपने शब्दों पर पछताना पड़े।

समाज में मिलने से हमारे अहंकार का नाश होता है, अपनेसे श्रेष्ठ पुरुषों से मिलने पर अपने लघुत्व का ज्ञान होता है।

मनुष्य की दिमागी शक्ति के उन्नत होने का एक उपाय चित्त की एकाग्रता है। इसका प्रयोजन एक समय में एक ही काम करना और वह सहृदयता से करना।

जो कुछ संसार से हमारी इच्छा के विरुद्ध होता है वह भगवान् की मरज़ी से होता है।

कोई काम आधे मन से न करो, यदि कार्य उत्तम है तो उत्साह पूर्वक करो, यदि निकृष्ट है तो उसको सर्वथा त्याग दो।

उदार मनुष्य किसी पदार्थ को स्वयं भोग कर प्रसन्न नहीं होता वह तो दूसरों को खिलाकर आनन्दित होता है।

यदि तुम्हारा शत्रु भूखा है तो उसे खिलाओ, यदि प्यासा है तो पिलाओ, ऐसा करने से तुम उसके शिर पर अग्नि का ढेर रखते हो।

जो काम तुमको पसन्द है, उसे स्वयं करो, दूसरों से कराने की इच्छा मत रक्खो, करने में आनन्द है और नहीं करने में दुःख है।

कुछ लोगों का मत है कि ज्ञान द्वारा ही हम प्रेम की तरफ अग्रसर होते हैं, और कुछ का यह मत है कि ज्ञान और प्रेम एक दूसरे पर निर्भर हैं।

प्रेम अन्य साधनों की अपेक्षा आसान साधन है। प्रेम प्रत्यक्ष प्रमाण है, इसको किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। प्रेम का रूप शान्ति और आनन्द है।

प्रेम, ज्ञान से बढ़कर है। प्रेम से सब कुछ समाप्त होजाता है। समस्त ज्ञान का आधार प्रेम ही है। शुद्ध ज्ञान और शुद्ध प्रेम में कुछ भी अन्तर नहीं है।

ज्ञान पुरुष का स्वरूप है और प्रेम स्त्री का स्वरूप है। पुरुष बाह्य मकान में प्रवेश कर सकता है परन्तु स्त्री का अधिकार महलों के अन्दर भी है। परमात्मा प्रेम से ही प्राप्त होता है।

बड़ी २ बातें करने से कोई आदमी पवित्र और सदाचारी नहीं होता, निर्मल जीवन ही मनुष्य को भगवान् का प्यारा बनाता है।

भगवान् के प्रेम और सेवा के अतिरिक्त संसार की अन्य सब वस्तुएं मिथ्या हैं और उन पर गर्व करना अहंकार है

यश की इच्छा और ऊंची पद-मर्यादा का लोभ भी छुद्रा है और अहंकार प्रगट करता है।

दीर्घ जीवन की कामना करना और अच्छे एवं पवित्र जीवन से उदास रहना मूर्खता और अहंकार है।

वर्तमान जीवन पर ध्यान देना और जो कुछ आगे आने वाला है, उसकी परवा न करना भी मनुष्य का मिथ्या अहंकार है।

जो लोग अपनी कामनाओं के पीछे दौड़ते हैं, अपने अन्तःकरण को मैला और धुंधला कर लेते हैं वे ईश्वरीय विभूति से हाथ धो बैठते हैं।

भजन

कोई प्रीत की रीत सिखादे हमें,
कोई मन का मीत सिखादे हमें।
कोई ऐसा गीत सुनादे हमें,
खिल जाये जिससे दिलकी कली ॥ १ ॥
बनवासी मीत कहा जाने,
परदेसी प्रीत कहा जाने।
हम ऐसे गीत कहा जाने,
खिल जाय जिससे दिल की कली।
यहां दिल की कली तो कभी न खिली ॥ २ ॥
यह सब शहरों के धन्धे हैं,
यह हिसों हवस के फन्दे हैं।
हम तो सैलानी बन्दे हैं,
हम प्रीत की रीत कहा जानें ॥ ३ ॥
दिल जंगल ही में बहलता है,
यहां हुस्न पै इश्क मचलता है।
यहां प्रेम का सागर चलता है,
खिल जाये जिससे दिल की कली ॥४॥

२

सखी मोहन संग रास रचायें, रल मिल गायें।
प्रेम बढ़ायें, बलि बलि जायें ॥
दुःख हर्ता जग पालन हारे, प्यारे कृष्ण मुरार।
मोहिनी मूरत प्यारी सूरत, सुन्दर रूप तिहारा ॥
बांकी चितवन मुखड़ा प्यारा,
श्याम वरन कैसा रूप तिहारा।
दरस दिखा सुन्दरिया अपना बना ॥ सखी० ॥
राधे तुमरे नाम बिन मोरा आधा नाम।
प्रेम तुम्हारे कर दीनों है मुझ को राधे श्याम ॥
मधुर मधुर तोरा तान सुनाना,
पल छिन मन मोरा हरले कान्हा।
कृष्ण मुरार मोरे प्यार तुम ही हमार ॥ सखी० ॥

३

मैंने मोहन को सदा बंशी बजाते देखा ॥
मैंने उस सांवले को गौवें चराते देखा ॥
एक दफा मैंने उसे माखन चुराते देखा ॥
एक दफा कौरवों से जंग छिड़ाते देखा ॥
महाभारत में उसे ज्ञान सुनाते देखा।
मित्र अर्जुन का उसे रथ भी चलाते देखा ॥
चीर अबला के उसे हमने बढ़ाते देखा।
अपने भक्तों के लिये बन्धन में आते देखा ॥

४

श्यामा मन मोह लिया तेरी बंसरी पियारी ॥ टेक ॥
राधा तेरे प्रेम ने पाया जादू प्रेम पुजारी से ॥
मोर मुकुट दो छवि है न्यारी प्रेम भरे तेरे नैन पियारी
राधा जादू पालिया प्रेम की प्यास मुरारी से ॥
दर्शी भरे मैंनूं मटके दिखाओ,
रस भरी श्यामा मैंनूं बंसी सुनाओ।
यह लो सुनो बंसरी श्यामा,
हमतो सब बलिहारी ने ॥

REG DNo. .L 2077

भक्ति प्रेस में मिलने वाली पुस्तकें।

१.	भगवद्गीता संस्कृत तथा भाषा टीका सहित	मूल्य	॥=)
२.	भगवद्गीता दशम अध्याय पर्यन्त ...	,,	।=)
३.	गीता मूल (मोटा टाइप)	मूल्य नित्य पाठ	
४.	वेदोपनिषद्		।=)
५.	अष्टोत्तरशतमन्त्रमाला	,,	=)।
६	ज्ञानधर्मोपदेश	,,	=)॥।
७.	भक्ति ज्ञान योग संग्रह	,,	=)॥
८.	सत्य शब्द संग्रह (गुटका)	,,	=)
९.	सत्य शब्द संग्रह	,,	॥=)
१०.	शब्द सदाचार संग्रह	,,	=)॥।
११.	शब्द सार संग्रह	,,	=)।
१२.	शब्दसंग्रह	,,	=)॥
१३.	सारसंग्रह	,,	।)
१४.	भाषा फक्किका प्रकाश	,,	।=)
१५.	मनुस्मृति सार	,,	=)।
१६.	भक्ति चिन्तामणि	,,	।=)
१७.	भगवद्भक्तांक	,,	॥=)
१८.	भगवदंक	,,	॥।)
१९.	गवांक	,,	१।)
२०.	महात्मांक	,,	१)

नोटः—एक रुपये से कम मूल्य की पुस्तक मंगाने वालों को डाक महसूल सहित टिकट भेजने चाहियें।

मिलने का पताः—

श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

मुद्रक तथा प्रकाशक भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।